ज्ञानामृत

जुलाई, 1988
वर्ष 24 ❋ अंक 1

मूल्य 1.75

नारी तू कल्याणी बन, वरदानी बन!

सम्बंधित लेख पृष्ठ १४ से १७ तक पढ़ें।

मुम्बई (नैपियन सी रोड) सेवाकेन्द्र पर आयोजित एक कार्यक्रम में दादी चन्द्रमणि जी, संयुक्त मुख्य प्रशासिका, ई० वि० वि० विदेश-सेवा का अनुभव सुनाते हुए।

माऊण्ट आबू – राजस्थान राज्य के स्वास्थ्य मंत्री भ्राता रघुनाथ विश्नोई जी के ई० वि० वि० के मुख्यालय में पधारने पर दादी प्रकाशमणि जी उन्हें ईश्वरीय सौगात भेंट कर रही हैं।

बोकारो में नव निर्मित 'राजयोग भवन' का उद्घाटन दृश्य। दादी प्रकाशमणि जी, मुख्य प्रशासिका, ई० वि० वि० तथा अन्य मोमबत्तियां प्रज्जवलित कर रहे हैं।

कलकत्ता में नये सेवाकेन्द्र के भवन का शिलान्यास करने के बाद ब्र० कु० दादी प्रकाशमणि जी प्रवचन करते हुए।

माऊंट आबू राष्ट्र भाषा समिति के संसद के सदस्य ब्रह्माकुमारी ई० वि० विद्यालय के मुख्यालय में पधारे। बालकवि बैरागी, भ्राता जे० चोकाराओ, भ्राता खादरशाह, भ्राता मुहम्मद अमीन, श्रीमति केसर बाई – संसद सदस्य तथा स्टेट बैंक के उपमहाप्रबन्धक तथा अन्य ब्र० कु० बहिन, भाइयों के साथ पांडव भवन में।

भुवनेश्वर में आयोजित 'आध्यात्मिक महासम्मेलन' में सभा को सम्बोधित करते हुए (बाएं से) ज्ञानी मलकियत सिंह जी, कैथोलिक चर्च के फॉदर अन्सेलम बिसवाल जी मौहम्मद मुस्लिम संस्थान के मौलवी एस० ए० हबीम जी, भ्राता एस० दास०, जी० बी० सी०, इस्कॉन तथा ब्र० कु० जगदीश चन्द्र जी, मुख्य प्रवक्ता, ई० वि० वि०।

इन्दौर – 'मानव विकास परिचर्चा' में कवि एवं साहित्यकार डा० शिवमंगल सिंह सुमन जी सभा को सम्बोधित कर रहे हैं।

केथल में 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' सम्मेलन में सम्बोधित करती हुई ब्र० कु० दादी प्रकाशमणि जी

मोदीनगर में आयोजित 'बालिका व्यक्तित्व विकास शिविर' में भाग ले रहीं बालिकाएं बहन गायत्री मोदी जी, ब्र० कु० –चन्द्रिका बहन तथा अन्य के साथ दिखाई दे रही हैं।

Regd No. 10563/65-D. (E)—70

बम्बई (विरले पारले): सेवाकेन्द्र पर ११ रूसी वैज्ञानिक तथा तकनीकज्ञ पधारे। वे ईश्वरीय सन्देश लेने के पश्चात् ब्र० कु० योगिनी तथा ब्र० कु० करीना के साथ खड़े हैं।

भुवनेश्वर—'सुखमय संसार बनाने तथा तकनीकिज्ञ-सहयोग' के विषय पर आयोजित कार्यक्रम में ब्र० कु० दादी जानकी जी प्रवचन करती हुई।

उदयपुर में आयोजित एक समारोह में गरीब महिलाओं को साड़िया भेंट करती हुई ब्र० कु० शील बहन।

बम्बई (गामदेवी)—सिने-अभिनेता भ्राता धर्मेन्द्र को ईश्वरीय सन्देश देती हुई ब्र० कु० कुसम बहन।

दिल्ली (राजौरी गार्डन) की ओर से एल० आई० सी० के अधिकारियों के स्नेह मिलन में मंच पर मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमति सुमति ओरन, भारत की समाज कल्याण उपमंत्री, भ्राता पद्मानाभन एल० आई० सी० के उत्तर क्षेत्रीय प्रबन्धक तथा डी० पी० नारायन, संभागीय प्रबन्धक दिल्ली, भ्राता स्टीव नारायन, ग्याना के उच्चायक्त तथा अन्य उपस्थित हैं।

अमृत-सूची

१.	जैसा लक्ष्य, वैसे लक्षण	१
२.	हर वर्ग विशेष है, हर आत्मा विशेष है (सम्पादकीय)	२
३.	हिम्मत न हार	५
४.	विश्व सहयोग	८
५.	धैर्यता की शक्ति	१२
६.	शेर से जीतने वाला मकड़ी से पराजित	१३
७.	नारी तू कल्याणी बन	१४
८.	विद्यार्थियो, इन्हें अपनाओ और सदा सुख पाओ	१८
९.	अहं भाव का त्याग	२४
१०.	निमित्त भाव	२६
११.	'सत्य की खोज' – एक अनुभव	२७
१२.	नैतिकता	२८
१३.	कामना	२९
१४.	सेवा समाचार (सचित्र समाचार)	३०

जैसा लक्ष्य वैसे लक्षण

संसार में बहुत-से लोग ऐसे हैं जिनका लक्ष्य खाना, पीना और मौज उड़ाना ही है। वे शरीर से अलग 'आत्मा' नाम की शाश्वत सत्ता को नहीं मानते। वे पुर्नजन्म और कर्म के अटल सिद्धान्त में भी आस्था नहीं रखते। उनका मत है कि जब तक यह शरीर है तब तक ही यह सब-कुछ है। अतः उनका लक्ष्य भी यहीं तक सीमित रहता है और उनमें लक्षण भी तदानुसार ही होते हैं। मनुष्य के मन में जैसा आदर्श हो वैसे ही उनके कर्म होते हैं। कोई अभिनेता बनना चाहता है तो उसका क्रिया-क्लाप, हावभाव, वार्त्तालाप उसी प्रकार ही होने लगते हैं। कोई सेठ बनना चाहता है तो उसकी बुद्धि उसी ओर चलने लगती है। वास्तव में देखा जाय तो ये सब जीविकोपार्जन के साधन हैं और ये लक्ष्य जीवन के अन्तिम लक्ष्य नहीं हैं। मनुष्य से देवता बनना, सद्गुणों का विकास करना, चारित्रिक रूप से महान् बनना ही मनुष्य का ध्येय होना चाहिये। इस ध्येय के फलस्वरूप मनुष्य को यह ध्यान रहेगा कि मुझे अच्छे कर्म करने हैं। इस लक्ष्य से उसमें दैवी लक्षण आयेंगे और उसका चरित्र महान् बनेगा।

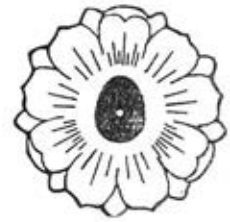

कृपया ध्यान दीजिये

ज्ञानामृत के २४ वे वर्ष का प्रथम अंक आप प्राप्त कर चुके हैं अभी तक भी कुछ सेवाकेन्द्रों के ज्ञानामृत के सदस्यों की संख्या हमारे पास नहीं पहुंची है। कृपया सदस्यों की संख्या शीघ्र अति शीघ्र लिख भेजें। साथ-साथ मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा शुल्क भी भेज देवें। शुल्क केवल 'ज्ञानामृत' '(Gyan Amrit') के नाम ही भेजें। ज्ञानामृत शुल्क इस प्रकार है।

वार्षिक शुल्क	– २० रुपये
अर्द्ध वार्षिक शुल्क	– १० रुपये
प्रति कापी	– १.७५ रुपये
आजीवन सदस्यता	– २५० रुपये

मानव जीवन का उद्देश्य जानने के लिए ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग का पत्राचार पाठ्यक्रम

सात रोचक पाठ, १८ रंगीन चित्र,
प्रश्नोत्तर की व्यवस्था, मूल्य: १२ रुपये मनीऑर्डर द्वारा
पता:— निर्देशक पत्राचार पाठ्यक्रम
२५, न्यू रोहतक रोड नई दिल्ली – ११० ००५

हर वर्ग विशेष है, हर आत्मा विशेष है

पिछले दिनों मधुबन में विभिन्न वर्गों की सेवा के लिए बहनों और भाइयों की जो विचार गोष्ठियाँ हुईं, उनसे एक और बात सामने आई। वह यह कि शिव बाबा और ब्रह्मा बाबा ने तो यह कहा ही हुआ है कि हरेक आत्मा में कोई-न-कोई विशेषता है और कि जो दैवी कुल भूषण ईश्वरीय ज्ञान के नियमों पर पूरी तरह चल रहे हैं, वे तो निस्सन्देह विशेष आत्माएँ हैं ही। इस बात को मन में रखते हुए हरेक वर्ग की गोष्ठी में सम्मिलित होने वाले बहन-भाइयों से पूछ ही लिया गया कि उस-उस वर्ग अथवा व्यवसाय वालों की क्या विशेषताएँ मानी जाती हैं। यदि कोई व्यक्ति व्यापार करता है तो अवश्य ही उसमें कोई ऐसी विशेषता होगी जिससे वह व्यापार में सफल होता है। अन्य कोई यदि प्रशासक वर्ग में है तो अवश्य ही उसमें प्रशासकीय योग्यताएँ होती हैं। इस प्रकार दूसरे-दूसरे वर्गों के लोगों में भी वर्गानुगत विशेषताएँ अवश्य होंगी।

हरेक वर्ग के बहन-भाइयों से उनके वर्गानुगत विशेषताएँ पूछने पर बहुत-सी अच्छी लाभदायक एवं कल्याणकारी विशेषताएँ सुनने को मिलीं। ऐसा महसूस हुआ कि जिन दिव्य गुणों की धारणा की हम चर्चा करते हैं, उन गुणों के साथ-साथ, उन विशेषताओं को धारण करना भी ज़रूरी है। ऐसा भी महसूस हुआ कि कल्याणकारी बाबा ने हमें इन वर्गों की सेवा करने के लिए जो आदेश-निर्देश दिया है और साथ-साथ गुण-ग्राहक वृत्ति बनाए रखने के लिए भी हमें जो शिक्षा दी है, उस आदेश-निर्देश और शिक्षा को पालन करने से स्वयं हममें भी उन गुणों का विकास होगा। जिस-जिस वर्ग में जो-जो विशेषताएँ हैं, वे उनके वर्ग में सफल और कार्य-कुशल होने के लिए तो जरूरी हैं ही परन्तु साथ-साथ हरेक आत्मा के सर्व गुण सम्पन्न बनने के लिए भी प्रायः जरूरी हैं। हाँ, कुछेक विशेषताएँ हैं जो केवल व्यावसायिक सफलता के लिए ज़रूरी होती हैं परन्तु अन्य बहुत सारी विशेषताएँ केवल उस वर्ग के व्यक्तियों के लिए ही नहीं बल्कि हर नर-नारी के व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास के लिए आवश्यक हैं।

इस चर्चा का एक पहलु और भी है। वह यह कि कोई व्यक्ति चाहे वकालत का पेशा न भी करता हो तो भी उसे जीवन में कई बार वकालत तो करनी ही पड़ती है। अर्थात् जहाँ दो-तीन प्रकार के विचार हों, उनमें से अच्छी बात को जचाने के लिए या किसी को हमारे प्रति ग़लतफ़हमी हो तो उसे सप्रमाण रीति मिटाने के लिए या हम पर कोई मिथ्या दोष लगाए तो विधिपूर्वक और न्यायसंगत रीति से, अपनी प्रतिष्ठा को सुरक्षित करने के लिए स्वयं अपना वकील तो बनना ही पड़ता है। अनेक बार ऐसा भी होता है कि किसी की ठीक बात दूसरे लोग नहीं मान रहे होते या किसी निर्दोषी को दोषी सिद्ध करने की कुचेष्टा करते हैं या किसी असमर्थ के साथ अन्याय करने पर तुले होते हैं, तब भी उस व्यक्ति का—नहीं, नहीं—हमें अपनी अर्न्तआत्मा की आवाज़ का वकील बनकर लोगों के सामने अपना दावा रखना पड़ता है।

इतना ही नहीं बल्कि इस ईश्वरीय ज्ञान व योग की सत्यता को सप्रमाण रीति से लोगों के सामने रखना और उनकी बुद्धि रूपी निर्णायक अथवा न्यायाधीश से इस ज्ञान तथा योग के पक्ष में फैसला लेना भी एक प्रकार की वकालत ही है जिसमें कि विपक्ष के तर्कों को न्याय-विरुद्ध सिद्ध करना पड़ता है।

इसी प्रकार ज्ञान-रत्नों को ऐसे तरीके से लोगों के समक्ष पेश करना कि लोग इन्हें लेने को तैयार हो जाएँ—यह भी एक प्रकार का व्यापार है। इसे 'सच्चा सौदा' कहा गया है। ग्राहक केवल किसी वस्तु के नहीं होते बल्कि गुणों को लेने वाले को भी **गुण-ग्राहक** कहा जाता है।

फिर, यदि इस दृष्टि से देखा जाए कि हरेक मनुष्य को जीवन-भर कुछ-न-कुछ सीखना होता है तो संसार-भर के सभी नर-नारी जीवन-पर्यन्त शिक्षार्थी अथवा विद्यार्थी हैं। जिसका जीवन विद्यार्थी के जैसा नहीं रहता, उसका विकास वहीं रुक जाता है और उसका अध्ययन-क्रम बन्द हो जाने से वह जीवन-कला में पारंगत नहीं होता।

इसी विधि से देखा जाए तो किसी ने सच कहा है कि जिसके जीवन में उत्साह और उंमग नहीं अथवा मनोबल

की दृढ़ता और डटकर कार्य करने की मनोस्थिति नहीं तो शारीरिक रूप से जवान होते हुए भी वह बूढ़ा है। और यदि कोई श्वेत-केशी हो जाने पर भी मानसिक रूप से बलवान है और उत्साह तथा उमंग की दृष्टि से सुदृढ़ है, तो वह बूढ़ा होने पर भी जवान है। इसके विपरीत, जो व्यक्ति अल्पायु होने पर भी समझ से कार्य करता है और अपने कार्य-व्यवहार में अनुभव की परिपक्वता की झलक दिखाता है तो वह आयु की दृष्टि से छोटा होते हुए भी अनुभव की दृष्टि से बुजुर्ग है।

इसी प्रसंग में शायद कोई कहेगा कि पुरुष तो सदा पुरुष वर्ग का होता है और नारी सदा नारी वर्ग की ही होती है– इनके विषय में पूर्वोक्त वर्गों की तरह ऐसा नहीं कहा जा सकता कि जिस नर में फलां गुण है, वह नारी के समान है और जिस नारी में अमुक गुण है, वह पुरुष के समान है। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। जो व्यक्ति साहसी, निर्भय और कठोर परिश्रम अथवा पराक्रम को करने वाला होता है, इसे 'पुरुष' ही माना जाता है चाहे शारीरिक दृष्टि से वह नारी ही क्यों न हो। इसके विपरीत यदि कोई पुरुष भीरू अथवा डरपोक हो, अधिक लज्जाशील हो, नाजुक मिज़ाज हो अथवा नख़रे करता हो (माताएँ-बहनें हमारी इस बात को बुरा न मानें!) तो वह नारी के समान है। विशेष रूप से जो सामने ही न आता हो, दूसरों के पीछे छिप कर काम करता हो, उसके लिए तो कहा ही जाता है कि 'घूँघट वाली नारी' है। इसी प्रकार जिसमें वात्सल्य हो, मन की कोमलता हो, दया की भावना हो, ममता हो, उसके विषय में कहा जाता है कि यह 'पिता' होने पर भी 'माता-तुल्य' है अथवा इसका शरीर पुरुष का लेकिन हृदय नारी का है।

कहने का भाव यह है कि हरेक वर्ग में कुछ अच्छे गुण होते हैं जो उस वर्ग की विशेषता कहलाते हैं। उन विशेषताओं को भी जीवन में धारण करने से हमारा व्यक्तित्व निखरता है, विशाल एवं समृद्ध होता है और प्रतिभाशाली बनता है। इस बात को सामने रखते हुए इन ६ वर्गों के विशेष गुणों का उल्लेख करना उपयोगी होगा जिन ६ वर्गों की गोष्ठियाँ पिछले दिनों मधुबन में हुई थीं परन्तु स्थानाभाव के कारण हम उनमें से केवल २ वर्गों की विशेषताओं का उल्लेख करेंगे।

वैज्ञानिकों एवं तकनीकज्ञों की कुछ विशेषतायें

वैज्ञानिकों और तकनीकज्ञों की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि वे सदा अपने कार्य में सम्पूर्णता (Perfection) लाने की चेष्टा करते हैं। पहले-पहल जब कोई सिद्धान्त बनता है और उसके आधार पर कोई यन्त्र अथवा कोई उपयोगी उपकरण बनता है तो वह प्रारम्भिक स्तर का होता है अर्थात् कार्य, कला तथा आकृति की दृष्टि से अधिक व्यवस्थित, कुशल और सुन्दर (Refined) नहीं होता। वैज्ञानिक निरन्तर उसके सुधार, विकास, संशोधन अथवा सौन्दर्य को बढ़ाने (Improvement) में लगे रहते हैं। इससे न केवल वह मशीन अथवा वस्तु अधिकाधिक छोटी (Micro) बनती जाती है बल्कि उसकी कार्यक्षमता बढ़ती जाती है, उसमें शक्ति कम खर्च होती है, उसका प्रयोग सरल होता जाता है, उसमें त्रुटि होने की भावना न्यून होती जाती है और वह देखने में भी अधिकाधिक सुन्दर होती जाती है। इसीलिए कहा गया है कि वैज्ञानिक और तकनीकज्ञ किसी चीज़ का निर्माण करने के बाद ठाली नहीं बैठते बल्कि (१) प्रगति और विकास के कार्य में लगे ही रहते हैं और (२) उत्तमता (Quality Enhancement) अथवा सम्पूर्णता (Perfection) को सामने रख कर उसमें (३) सुधार (Improvement) करते ही रहते हैं और (४) अधिकाधिक सूक्ष्मता (Macro to Micro) की ओर बढ़ते हैं। वे (५) अपनी कृति और अपने कार्य को अधिकाधिक त्रुटि-रहित एवं सम्यक (accurate) बनाते जाते हैं।

अन्यश्च, वैज्ञानिकों एवं तकनीकज्ञों में एक विशेषता यह भी होती है कि वे अन्ध–श्रद्धा या हठधर्मी या रूढ़िवादिता से ऊपर उठकर सप्रमाणिकता, कारण व परिणाम के नियम, निरीक्षण व परीक्षण (Observation and Experimentation) पर ही अपने विचारों को आधारित करते हैं और यदि कोई युक्तियुक्त रीति से उनके मन्तव्य या सिद्धान्त में कोई त्रुटि बताए तो वे भड़क नहीं उठते बल्कि अगर वो आलोचना ठीक हो तो उसे स्वीकार करते हैं वर्ना युक्ति के बल से उसका निराकरण करते हैं।

यदि इन उपरोक्त विशेषताओं को ध्यान में रखा जाए तो हम मानेंगे कि योग भी एक विज्ञान है। शिव बाबा ने हमें जो ज्ञान व योग सिखाया है, उससे भी हमारे व्यक्तित्व में इन विशेषताओं का विकास होता है। वास्तव में हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि हमारे जीवन में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा ज्ञान को व्यावहारिक जीवन (Practical), में लाने की तकनीक तथा हमारी स्थिति में सम्पूर्णता (Perfection, accuracy, improvement, refineness) कहाँ तक आती जा रही है तथा लोगों को यह ज्ञान समझाने की कला में भी कहाँ तक

गुणात्मकता तथा श्रेष्ठता (Qualitative Improvement and Accuracy) आ रही है।

व्यापारी वर्ग की विशेषतायें

व्यापारी वर्ग के व्यक्ति यह बात अच्छी रीति से जानते हैं कि वे अपनी चीज़ को किस तरह से लोगों को दिखाएँ और जचाएँ ताकि ग्राहक खाली न जाए। वर्ना यदि दिन-भर में आने वाले ग्राहक आ-आकर चीज़ देख-देख कर सौदा लिये बिना वापस चले जाएँ तब तो व्यापार चलेगा ही नहीं और साथ-साथ व्यापारी के मन में यह विचार पैदा होगा कि मैं सारा दिन लोगों को चीज़ें निकाल-निकाल कर दिखाता हूँ और फिर लपेट-लपेट कर रखता हूँ और ग्राहक टिकता ही नहीं। अतः अच्छा व्यापारी वह है जो मुस्कुराते हुए, मीठे वचन बोलते हुए, चीज़ को सुन्दर-सी पैकिंग में से निकालकर ऐसे ढंग से उसको दे व दिखाए कि ग्राहक को वह चीज़ लेने में रुचि पैदा हो और वह सौदा ठीक सौदा मालूम पड़े। दूसरी बात यह है कि व्यापारी को ग्राहक की पहचान भी होनी चाहिए। वह यह भी समझ सके कि यह व्यक्ति ख़रीदने वाला भी है या चीज़ों को देख-देख कर ही खुश होने वाला है और जेब से पैसे निकालने वाला नहीं है। अगर उसने अच्छे खरीदार की ओर ध्यान नहीं दिया और उसे २-४ नमूने दिखाने में सुस्ती की तो भी उसका व्यापार ठीक नहीं चलेगा। और यदि वह किसी निकम्मे खरीदार से ही अधिक बातचीत करने में लगा रहा, तब अच्छा खरीदार तो यह सोच कर चला जाएगा कि यह व्यापारी हमें पूछता ही नहीं, हमें माल ही नहीं दिखाता और हमारी तरफ़ ध्यान भी नहीं देता।

ग्राहक को पहचानने के अतिरिक्त व्यापारी में बात करने का भी ढंग होना चाहिए जिससे वह ग्राहक के मन को जीत ले तथा उसका स्वयं में विश्वास बिठा दे। यदि ग्राहक का उसमें विश्वास पैदा नहीं होगा कि यह ठीक चीज़ देता है, ठीक दाम लगाता है और ठीक व्यवहार करता है तो दोबारा उस दुकान पर नहीं आएगा। अन्यश्च, यदि व्यापारी ग्राहक से बिना मतलब के लम्बी-चौड़ी बात करता जाए तो दूसरा-तीसरा-चौथा-ग्राहक तो ताँक कर ही चला जाएगा और व्यापारी बात ही करता रह जाएगा। जब वह रात को घर लौटेगा तो बीबी बच्चों के लिए क्या कमा कर ले जाएगा। अतः अच्छा व्यापारी उतनी ही बात करता है जितनी बात से सौदा पटे। इसलिए अंग्रेजी भाषा में कहते हैं Let it be business-like अथवा let us talk business. इसका यह अर्थ नहीं कि "आओ, हम व्यापार की बात करें"। बल्कि इसका यह भाव है कि आओ, हम काम की बात करें। जैसे व्यापारी किसी चीज़ को बेचने में कुशल होता है, वैसे ही दूसरे को अपनी बात जचाने के बारे में अंग्रेज़ी में कहा जाता है Let us sell our idea. इस प्रकार व्यापारी व्यक्ति कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक ग्राहकों को अधिक-से-अधिक माल बेचना जानता है। वह समय की कीमत को पहचानता है।

एक बात और, व्यापारी ऐसा माल ख़रीदने में पैसे ख़र्च (invest) करता है जो बिक सके और जिसमें काफी लाभ हो। गोया वह अपने धन, समय व अपनी शक्ति को लाभ देने वाली वस्तुओं में ख़र्च करता है और अपनी वस्तु के लिए प्रचार (Publicity) करना भी जानता है तथा बेचने के मौके को हाथ से नहीं जाने देता।

इन्हीं गुणों को हमें अपने व्यक्तित्व में धारण करना है। किसी भी व्यक्ति को ज्ञान कैसे जचाएँ, इस सच्चे सौदे में उसकी दिलचस्पी कैसे पैदा करें व कम से कम समय में अधिक-से-अधिक लोगों को लाभ कैसे पहुँचाए व अपने तन और समय को ज्ञान और योग को देने की किस विधि पर लगाएँ जिससे कि अधिक-से-अधिक लोग इसका लाभ प्राप्त कर सकें। इसी दृष्टिकोण से कई बार शिव बाबा ने कहा है कि आप ईश्वरीय ज्ञान के मैनेजर हो। शिव बाबा ने ब्रह्मा बाबा का रथ लिया जो कि बहुत बड़े व्यापारी थे और जो दूसरों तक ज्ञान पहुँचाने की व गुणों का ग्राहक बनाने की कला जानते थे। हमें भी व्यापारी वर्ग की इन विशेषताओं को धारण करना है और व्यापारी वर्ग को उनकी इन विशेषताओं के कारण ईश्वरीय सेवा में लगाना है।

हमने ऊपर केवल २ वर्गों की विशेषताओं का संक्षिप्त परिचय दिया है। इससे यह तो अन्दाज़ा हो ही गया होगा कि सहनशीलता, नम्रता, मधुरता इत्यादि दिव्य गुणों के अतिरिक्त और भी गुण हैं जिनसे हमारा व्यक्तित्व विकसित होता है और संगम युग में सेवा कार्य में भी हमें मदद मिलती है। अतः सर्व गुण सम्पन्न बनने के लिए तथा ईश्वरीय सेवा में अधिकाधिक सफल होने के लिए हमें इन्हें भी अपने जीवन में अपनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त जब किसी भी वर्ग का व्यक्ति हमारे सामने आए और हमें अपने वर्ग का परिचय दे तो उस समय भी हमें उस आत्मा की उन विशेषताओं को सामने रखते हुए उस विधि से ज्ञान देना चाहिए और उस व्यक्ति को भी ऐसी प्रेरणा देनी चाहिए कि वो अपनी विशेषताओं को ईश्वरीय सेवा में प्रयोग कर योगी और सहयोगी बन सके।

—जगदीश

"हिम्मत न हार"

ब्र० कु० सूरज कुमार, माउण्ट आबू

राकेश एकान्त में घूम रहा है···· उसे कुछ आन्तरिक आकर्षण-सा अनुभव हो रहा है···· मन में एक गहन-सा सन्नाटा छाता जा रहा है···· मन में ईश्वरीय महावाक्य गूँज रहे हैं···· इस बार तो शिवबाबा के महावाक्यों में वन्डर हो गया, सारे गुह्य रहस्य खुल गये···· बाप-समान बनने की महान् प्रेरणाएँ बाबा ने हमें दीं। क्या हम एक वर्ष भी डट कर तपस्या नहीं कर सकते····!

समय भी कितना कम दिया···· ६ मास तो बीत गये, इतने समय में मैंने क्या किया? बाबा ने कहा था कि ६ मास की रिज़ल्ट देखेंगे....मेरी रिज़ल्ट कैसी है? क्या ऐसी कि जिसे देखकर भगवान् भी प्रसन्न हो···· क्या मुझे विश्वास है कि मैं बाप-समान बन सकूँगा!! बड़ा कठिन काम है···· 'भगवान् समान बनना'···· हिम्मत ही नहीं होती।

इतने में ईश्वरीय महावाक्य उसके मानस पटल पर उभरने लगे—"बच्चे, सर्व सम्बन्धों से बाप की मदद तुम्हारे साथ है, इसका पूरा लाभ उठाओ···· मैं तुम्हारे साथ हूँ···· तुम जो चाहो कर सकते हो"

राकेश उमंग से खड़ा होकर घूमने लगता है (अपने ही मुख से)—"कितना सुन्दर समय है, भगवान् साथ हैं, उसके वरदान साथ हैं, वही सब कुछ कर रहा है···· वह हम पर कुर्बान है···· हमें तो केवल कदम बढ़ाना है···· ऐसा चाँस तो कठिन तपस्या करने पर भी प्राप्त नहीं होगा। मुझे दिन-रात एक कर देना चाहिए···· मैं नहीं करूंगा तो कौन करेगा····" इन्हीं आनन्दकारी विचारों में राकेश कुर्सी पर बैठ जाता है। टेप रिकार्डर का बटन दबाता है और गीत बजता है—

उपकार तुम्हारा बाबा····

और राकेश के मन की दिशा बदल जाती है, मन कहीं डूब जाता है, मन से खुशियों भरी आवाजें निकलती हैं—

'सचमुच, हे बाबा···· आपने हमारे लिए क्या नहीं किया···· बड़ा उपकार किया है हम पर···· शायद हम जानते भी नहीं हैं, शायद हमें सम्पूर्ण एहसास भी नहीं कि आप हमारे लिए क्या-क्या करते हो···· हमें स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी कि आप इस तरह हमारे बन जाओगे और तुम्हारे आशीर्वाद का हाथ सदा हमारे सिर पर होगा····

सचमुच, तुम्हारा उपकार···· हम जन्म-जन्म याद किया करेंगे। हे प्राणेश्वर, बोलो, इस उपकार के बदले में मैं क्या करूं···? आप चाहो तो मेरे प्राण ही ले लो···· मुझे अति आनन्द होगा····'

गीत पूरा होता है····

राकेश का चेहरा खिल उठता है।

(मुख से बोलता है)···· "हे बाबा, तुमने जो हम पर उपकार किया है, उसका रिटर्न मैं तुम्हारी 'बाप-समान' बनने की आशा को पूरी करके ही दूँगा···· हर कीमत पर···· हर तरह की कुर्बानी करते हुए···· सर्वस्व लुटा दूँगा मैं····

एक ही बार तो···· अरे केवल एक ही बार तो भगवान् की चुनौती को स्वीकार करने का आनन्द प्राप्त होता है···· मैं इस चुनौती को दिल से स्वीकार करता हूँ···· हर कीमत पर मैं इस महान् संकल्प को पूरा करूँगा····"

अब राकेश गम्भीर हो जाता है···· उसकी विचार-धारा बदली मैं ज्ञान में केवल ५ वर्ष से···· कइयों को २०, ३०, ५० वर्ष हो गये साधना करते···· मैं अकेला चना कैसे भाड़ फोड़ूँगा? स्वयं बाबाब्रह्मा को भी ३३ वर्ष लगे। मैं ५ वर्ष का नन्हा-सा वत्स, क्या मैं वह कर सकूँगा जो महारथी इतने वर्षों में भी न कर सके?

और इस प्रकार राकेश का मन निराशा की ओर चला····

इतने में ही उसका मित्र सुरेश उससे मिलने आया और राकेश का मग्न-सा, चिन्तित-सा चेहरा देखकर सुरेश बोला—

"क्यों मित्र, किस चिन्ता में हो? तुम सदा ही कहीं डूबे रहते हो? अरे खाओ, पिओ और संगम के दिन मौज से बिताओ। बोलो, आज क्या सोच रहे हो?"

राकेश—चिन्ता नहीं मित्र, मैं सोच रहा था—बाबा ने इस बार 'बाप-समान' बनने के लिए अन्तिम अवसर दिया

है, तो मुझे क्या करना चाहिए? मेरे दिल में अरमान बहुत हैं कि बाबा की यह आशा पूरी करूँ, परन्तु····

सुरेश—वाह भई वाह! पहले तपस्या की, भगवान मिले और अब भगवान मिले तो उसका सुख न लेकर फिर तपस्या करो 'बाप समान बनने' की, हम इन झंझटों में नहीं जाना चाहते, दोस्त! अरे, भगवान मिल गये···· बस, जो चाहे वह हमें दे। हमारी तो भाई सारी आशाएँ पूरी हो गईं। मैं तो अब कुछ भी चिन्ता नहीं करता। बाबा तो सदा ही कहता रहता है कि यह अन्तिम वर्ष है, पिछले वर्ष भी बाबा ने यही कहा था!

राकेश—बात तो ठीक है परन्तु वह कहता तो हमारे ही कल्याण के लिए है। उनकी बात तो माननी ही पड़ेगी। परन्तु है तो काफी कठिन काम। कहाँ भगवान् और कहाँ हम···· बड़ा भारी अन्तर है! उस जैसा महान् बन जाऊँ—बड़ी टेढ़ी खीर लगती है।

सुरेश—दोस्त, यही तो मैं भी कह रहा हूँ···· बाप समान निराकारी, निर्विकारी व निरंहकारी बनना—बाप रे बाप! उम्र बीत जाएगी, अपने वश का तो नहीं···· जब अपनी हैसियत से बाहर की ही बात है, फिर सोचें भी क्या ? छोड़ो, बहुत लोग हैं। और हाँ, हमने यह भी तो सुना है कि केवल ८ रत्न ही बाप समान बनते हैं। फिर भला हमें चाँस कहाँ, हमें कौन घुसने देगा ८ की माला में! इससे तो अच्छा है कि आनन्द,मौज से जो पुरुषार्थ हो, वो करते चलो, बाकी बाबा जाने। पुरुषार्थ की भी ज्यादा चिन्ता करने की क्या जरूरत····

राकेश—और फिर हम नये साधक···· कम अनुभव। वास्तव में हमारे लिए बाप-समान बनना नाखूनों से पहाड़ तोड़ने जैसा जटिल काम है। ठीक है, योग लगाते चलो बाबा करनकरावनहार है ही, जैसा वह कराये।

सुरेश—अच्छा, कुछ सर्विस का प्लॉन किया? "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार"—इसमें आपका क्या प्लॉन है?

राकेश—मुझे तो बाप-समान बनने की धुन थी, मैंने तो कुछ सोचा नहीं।

सुरेश—वाह भई वाह! सेवा छोड़कर कोई बाप-समान बना क्या? सेवा भी तो उसी की है। निरन्तर सेवा में रहो-यह भी तो याद ही है। हम बाबा की सेवा करें, वह हमें अवश्य ही सम्पन्न बनायेगा। बस, सरल-सा रास्ता है। हमने तो सेवा में दिन-रात एक करने का सोच लिया है।

राकेश—ठीक है, मैं भी कुछ प्लॉन बनाऊँगा। और बोलो····

सुरेश—धन्यवाद, मैं तो किसी से मिलने जा रहा था। सोचा, आपको भी हैलो करता चलूँ।

(उठता हुआ)—अच्छा,अब मैं चलता हूँ,कुछ सोचना—

राकेश···· एकान्त में घूमने लगता है और मन में सोच रहा है—

ठीक कहता है सुरेश, सेवा में लग जाएं। 'बाप-समान' बनना—ये अपने से नहीं होगा। बाबा जैसी घोर तपस्या, निरन्तर तपस्या, योग-निद्रा, अडोलता और सहनशीलता, गम्भीरता और उदारता—सचमुच, मेरे लिए तो हवाई किले बनाने जैसा ही है। बाप की सेवा हमें बाप-समान स्वतः ही बना देगी। छोड़ो, यह 'बाप-समान' बनने की नई चिंता····

राकेश स्वयं को हल्का कर बाहर जाने लगता है····

पुनः उसके मन में ईश्वरीय ध्वनि पड़ने लगी—

"बच्चे, हिम्मत न हारो, जहाँ हिम्मत है, वहीं बाप का सहयोग है। बच्चे, तुम मास्टर सर्वशक्तिवान हो, सर्वशक्तिवान की छत्रछाया में हो, मैं तुम्हारे साथ हूँ, तुम्हें ही बाप की आशाओं के दीप जगाने हैं।"

पुनः राकेश का तन-मन प्रफुल्लित हो उठा—

"मैं बाप-समान अवश्य बनूँगा···· मुझे सुरेश को फॉलो नहीं करना है···· मुझे तो बाप की आज्ञा मानकर उसके दिल को जीतना है, उसका गौरव बढ़ाना है.....मैं कमाल करके दिखाऊँगा···· जो काम कोई न कर सका, मैं वही करके संसार के सामने आदर्श प्रस्तुत करुँगा····।

जबकि भगवान ने स्वयं आज्ञा दी है तो अवश्य ही उसका बल भी हमारे साथ है। उसने कभी नहीं कहा कि नये बच्चे ऐसा नहीं कर सकते।"

राकेश ईश्वरीय महावाक्यों की अपनी डायरी उठाकर पढ़ता है—

भगवानुवाच— "बच्चे, निरन्तर योगी व निरन्तर सेवाधारी बनो, निरन्तर योग भी चलता रहे व निरन्तर सेवा भी, तब ही पास विद् ऑनर होंगे।"

राकेश खुशी में उछलता है····

'वाह बाबा वाह! सुरेश ने आधा ही याद रखा कि निरन्तर सेवा करनी है। परन्तु आपने तो कहा है कि दोनों का बैलेन्स हो।

और सेवा···· सेवा तो बहुत लोग कर रहे हैं, मैं उन्हें सूक्ष्म शक्ति का सहयोग दूँ ताकि वे सेवा में सफल हों और यही मेरी मनसा सेवा भी हो जाए।

राकेश—(बाबा से रूह-रिहान करता हुआ) 'अब आप ही बताओ, मैं क्या करूँ···· बाबा, मैं अवश्य ही, अवश्य ही पूरा ज़ोर लगा दूँगा इस वर्ष। आपकी श्रेष्ठ कामनाएँ

मेरे दिल की श्रेष्ठ कामनाएँ बन गईं। सच, तेरे बच्चे यदि तेरे जैसे न हों तो बच्चे बनने का लाभ ही क्या?.... अब आप ही मुझे गाइड करो।

"बस, निरन्तर तपस्या.... निरन्तर तपस्या.... सारा दिन कार्य-व्यवहार व सेवा करते हुए निरन्तर तपस्या... बड़ा कठिन काम। राकेश की भावनाएँ जागीं....

'परन्तु मुझे इस कठिन कार्य को सरल करना ही होगा। मुझे अपनी दीदी से राय करनी होगी। चलूँ दीदी के पास। वे तो २५ वर्ष की तपस्विनी हैं। उनके पास अवश्य ही कुछ नई योजना होगी।'

(राकेश अपनी दीदी चन्द्रिका के पास जाता है)

राकेश – ओम शान्ति....

चन्द्रिका – आज इस समय कैसे आये, राकेश भाई?

राकेश – आज सवेरे से ही मन में बाप-समान बनने की कुछ सुन्दर लहरें आ रही थीं। मन गद्‌गद् हो रहा था। सोच रहा था जल्दी से जल्दी बाबा की इच्छा पूरी कर दूँ....

चन्द्रिका – बड़ी अच्छी उमंग है। बाबा की भी यही दिल की आशा है और हम भी यही चाहते हैं कि हम जल्दी-जल्दी 'बाप-समान' बन जाएं।

परन्तु आपने इसके लिए सोचा क्या?

मैंने निरन्तर तपस्या करने की सोची....राकेश ने उमंग से कहा। परन्तु मेरी समझ में नहीं आया कि क्या करूँ, क्योंकि नई सेवा का कार्य भी तो हमें करना है।

चन्द्रिका – सेवा 'बाप-समान' बनने में कोई दीवार नहीं, बल्कि सहायक है। हमें सरल-चित्त होकर सबके सहयोग से यह सेवा करनी है। सेवा तो हम सब मिलकर करते ही रहेंगे।

राकेश – आपने मेरे दिल को पूरा हल्का कर दिया। नहीं तो, मैं भी सर्विस-कान्शियस (सर्विस-मय) हो गया था। अच्छा दीदी, अब तपस्या के बारे में मुझे कुछ बताओ।

चन्द्रिका – मेरे ख्याल में सबसे पहले तो हमें अपने को चारों ओर से कुछ समय के लिए समेट लेना चाहिए। कारोबार को भी थोड़ा नियन्त्रित कर देना चाहिए और दूसरों को जिम्मेदारी देकर स्वयं को थोड़ा मुक्त भी कर देना चाहिए और इधर-उधर के शौक को भी त्याग देना चाहिए। मैं समझती हूँ, कम से कम इस वर्ष के लिए स्वयं को हल्का या मुक्त कर देना परम आवश्यक है।

राकेश – ठीक कहा दीदी आपने....हमने पाँव भी तो बहुत फैला लिये हैं। हम लौकिक भी चाहते हैं व अलौकिक भी। सचमुच, संसार की इस मृगतृष्णा में भागकर हम अमृत चखना चाहते हैं जहाँ शीतल जल भी नहीं है। आज से मैं स्वयं को बहुत कुछ मुक्त करूँगा। धन तो बाबा ने दिया भी बहुत है, अभी ज्यादा हाय-हाय क्यों....

चन्द्रिका – यदि इतनी सुन्दर उमंगें हैं आपको तो और क्या चाहिए! बस, इसके बाद तो रास्ता साफ है। थोड़े समय में सुन्दर अनुभवों के लिए कोई भी एक बात लेकर उसे की मास्टरी कर ली जाए अर्थात् उसका इतना अभ्यास कर लें कि वह स्मृति में पूर्णतया समा जाए।

राकेश – 'कोई भी एक बात' – मैं समझा नहीं। और मुझे यह भी ख्याल चलता है कि क्या हम नये बच्चे कुछ कर पायेंगे?

चन्द्रिका – इसमें नये-पुराने की बात नहीं। पुरानों ने तो इतने वर्षों में मेहनत करके मक्खन निकाला है। नयों के लिए तो अपेक्षाकृत और ही सहज है। इसलिए निराशा का कोई स्थान नहीं।

तो हाँ, मैं यह बात कर रही थी कि कोई भी एक बात लेकर उस पर पूर्णतया मास्टरी की जाए। तो मैं आपके सामने ३ बातें रखती हूँ। आप कोई भी एक चुन लें और उस पर ही अभ्यास करें –

- भगवान (बाबा) मेरे साथ हैं
- मैं सर्वशक्तिवान की छत्रछाया में हूँ....
- मै इस देह में अवतरित सम्पूर्ण पवित्र आत्मा हूँ....

राकेश – समझा मैं, इनमें से एक बात लूँ....

चन्द्रिका – और उसका इस तरह अभ्यास करो....

मान लो आप लेते हैं कि "बाबा मेरे साथ हैं...."

- पहले एक हफ्ते तक प्रतिदिन २५ बार इस बात को याद करो और यह दृश्य बनाओ कि बाबा ऊपर से नीचे उतर रहा है और मेरे पास आ रहा है।
- फिर आप देखेंगे कि यह बात सहज रूप से स्मृति में रहने लगेगी। अब दूसरे हफ्ते इसी नशे का अभ्यास करो कि भगवान मेरे साथ हैं....इसका ही चिन्तन करो।
- फिर तीसरे हफ्ते – इसी बात को माया के विघ्नों को, अकेलेपन को या उदासी, निराशा को काटने के हथियार के रूप में प्रयोग करो।
- और चौथे हफ्ते – इसे ही योग-अभ्यास का आधार बना दो कि भगवान् सर्व सम्बन्धों से मेरे साथ हैं।

बस, इसका ही निरन्तर अभ्यास हो। तो आप देखेंगे कि विनाशकाल में भी यही अभ्यास क्या रंग लाता है!

राकेश – बहुत सुन्दर.... दीदी.... बस, मुझे राह मिल गयी। धन्यवाद दीदी.... आपने मेरी उमंगों में चार चाँद लगा दिये। मेरी निराशा को आशाओं का पानी दिया। अब मैं पूरा जोर लगा दूँगा। अपने अरमानों को पूर्ण करूँगा व बाबा की आशाओं को पूर्ण करके इस महान् लक्ष्य को पा लूँगा।

विश्व सहयोग

अनुवाद राजन्य जय सिह, देहली

एक समय था जब एक सुंदर जगत् आबाद था। यहाँ के लोग स्वस्थ और गठीले थे और सदैव शांति और सुख बना रहता था। यह सुन्दर जगत् आकाश की ऊँचाइयों में बसा था। सूर्य इस पर दिन-रात दमकता रहता। यह बड़ी ही खुशनुमा दुनिया थी और सब इसे प्यार करते, यह संसार था भी सबका ही।

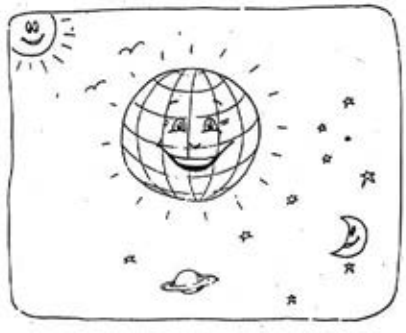

परन्तु धीरे-धीरे यह जगत् जैसा कि होना ही था, पुराना पड़ता गया। लगता है मानो जैसे इसकी पहले-सी शक्ति चूक गई हो। इसकी खूबसूरती भी समाप्त होती चली गई। वह जगत् विवेक तक खो बैठा और अंततः इतना तक भूल गया कि यह कौन था और इसे करना क्या था।

एक दिन भंयकर घटना घटी। नकारता की काली घटाएं छा गईं। इन्होंने सूर्य का प्रकाश भी रोक दिया।

फिर घृणा आई और सारे जगत् को प्यार-मुहब्बत से खाली कर दिया। अब वह जगत् उदास और अकेला पड़ने लगा।

फिर लोभ आ पहुँचा जिसने सब कुछ छीन कर उस सुन्दर दुनिया को बांझ और निर्धन बना दिया।

फिर आया स्वार्थ। इसने तो सारी दुनिया को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़कर इसे बेतरतीब और कलह से भर दिया।

उसके बाद क्रोध आ धमका और जगत् को श्रापित कर दिया। अब जगत् पिटकर घायल हो गया।

इन सबसे बुरा तो तब हुआ जब भौतिकवाद ने बागडोर संभाली और जगत् का जीवन ही छीन लिया। इसने जगत् की आत्मा का हरण कर लिया और इसे खाली ढोल की तरह बना दिया जिसके अंदर कुछ न बचा हो।

इनके बाद आई निराशा जिसने सारी आशाओं का गला घोंट दिया।

अंत में वह सुन्दर जगत् जिस जगह टिका था, वहां से गिर पड़ा।

यह घायल अवस्था में टूटा पड़ा था और हताश होकर रो रहा था।

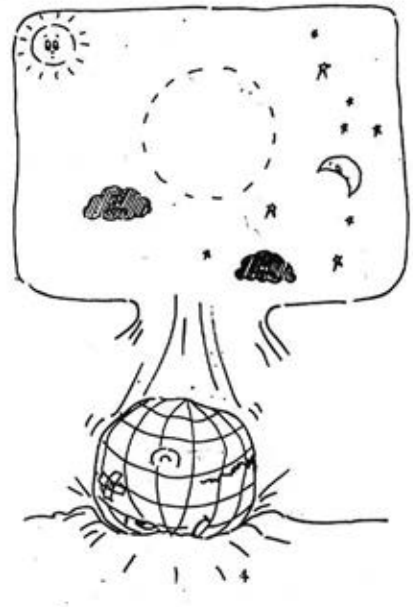

इस सुन्दर जगत की चीख-पुकार से बाकी संसार भी जाग गया। सारे लोग यह जानने के लिए इकट्ठा हो गए कि क्या हुआ है। उन्होंने देखा कि उनकी खुशनुमा दुनिया तो जमीन पर पड़ी सिसक रही है। उन्हें बहुत सहानुभूति हुई।

तमाशा देखने सब लोग आ जुटे थे।

राजनीतिज्ञ, डाक्टर, अध्यापक, दुकानदार, माताएं, बच्चे, कलाकार, पुजारी, योगी – सब के सब।

ये लोग सभी देशों और धर्मों से आए थे जो देखने में तो अलग-अलग लगते थे पर सब के दिलों में सुन्दर जगत् के लिए प्यार था। यह उनका ही जगत् जो ठहरा। उन्हें आभास था कि यह जगत् बड़ी शोचनीय स्थिति में है।

"दोष किसका है?" एक ने पुकारा।

आरम्भ में वे एक-दूसरे पर दोष मढ़ते रहे, फिर उन्हें भान हुआ कि दोष असल में किसी का भी नहीं। यह सब तो होना ही था, सो हो गया। बहस से इसका भला तो होना नहीं था।

"आओ यार, कुछ करते हैं।" एक ने कहा।

"लाओ, मैं इसे टिका दूं।" दूसरा बोला और आगे झुककर अकेले ही इसे उठाने लगा किंतु यह तो संभव नहीं था।

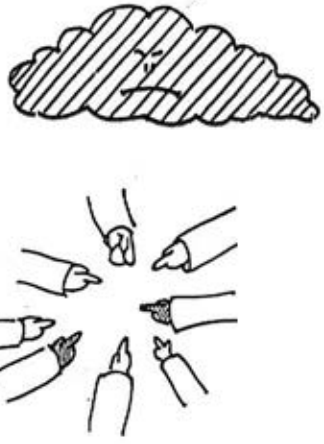

"रुको, तुम्हारा तरीका सही नहीं।" बीच में से एक व्यक्ति बोल उठा, "इसे मैं भी आजमा लूं।" और वह सुन्दर जगत् से यह पूछने में लग गया कि यह सब कैसे हुआ। परंतु जगत् तो बेहोशी में कुछ सुन नहीं सकता था।

एक व्यक्ति अपने समीप के व्यक्ति की ओर मुड़ा और बोला, "आप भी कुछ करते क्यों नहीं?"

"क्या फायदा?" वह बोला, "मैं तो कुछ नहीं कर सकता।"

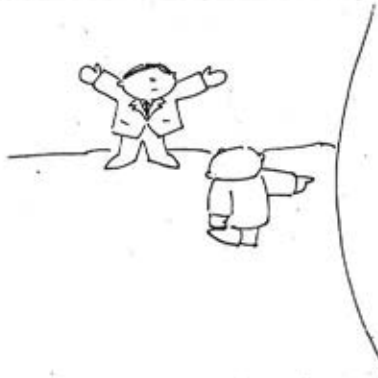

थोड़े समय बाद वे सब लाचार होकर बैठ गए। सुन्दर जगत् दिन प्रतिदिन बदतर हो रहा था। हरेक ने जितना श्रम किया उतना थोड़ा पड़ता गया। फिर उन्हें अचंभा होने लगा।

"क्या जगत् की हालत बेहतर की जा सकती है?"

फिर सहसा एक व्यक्ति उठ खड़ा हुआ। मुझे एक उपाय सूझा है! बजाए एक-एक करके सब एक साथ क्यों न कोशिश करें! एक दूसरे के सहयोग से और जितना बने उतना योगदान करके – हम सब निश्चय ही इस जगत् को बेहतर बना सकते हैं" सभी सहमत हो गए॥ ।।

और इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय सहयोग प्रणाली का सूत्रपात हुआ।

डॉक्टर आगे आया और जगत् को यथोचित् सुई लगाई। माता आगे बढ़ी और अपनी सहनशीलता और प्रेम का उपहार जगत् को दिया।

दुकानदार आगे आया और नई बेहतर दुनिया के निर्माण के लिए चंदा इकट्ठा कर दिया।

इंजीनियर ने जगत के चेहरे को नए सिरे से बनाना आरम्भ कर दिया। बच्चे ने अपनी अबोधता दान कर दी। राजनीतिज्ञ ने अपना समर्थन दिया। कलाकार ने खूबसूरती को बरकरार बना दिया। बूढ़े दम्पतियों ने जगत् को उसका सम्मान दिया। अध्यापक, गणितज्ञ – सभी बारी-बारी आगे बढ़े और जैसा बन सकता था वैसा योगदान दिया।

इसी बीच, जब यह चल रहा था, संगीतकार गाने - बजाने लगे और जगत् को उसकी मुस्कान लौटा दी।

इन सबसे बढ़कर ज्ञानी और योगी ने मिलकर सब धर्मों के लोगों को एक सूत्र कर दिया ताकि जगत् को उसकी आत्मा, उसका जीवन वापिस मिल सके।

अंत में जगत् सच्चाई, शांति, आशा और सुख से भर गया।

अब सिर्फ एक काम बाकी था – जगत् को कैसे आकाश में पहुँचाया जाए?

पर अब तक सबको मिलकर काम करने की आदत पड़ चुकी थी। अतः अतर्राष्ट्रीय सहयोग प्रणाली के लोगों का काम आसान हो गया।

वे एक दूसरे के समीप आए, एक दूसरे से मिले और ऐसी चीज बन गई जो आकाश तक सीढ़ी की तरह थी। एक-एक करके उन्होंने सुन्दर जगत् को ऊपर पहुँचाया और अपनी सही स्थिति में स्थिर कर दिया।

मिलकर उन्होंने वह कर दिखाया जो कोई अकेला स्वयं न कर पाता।

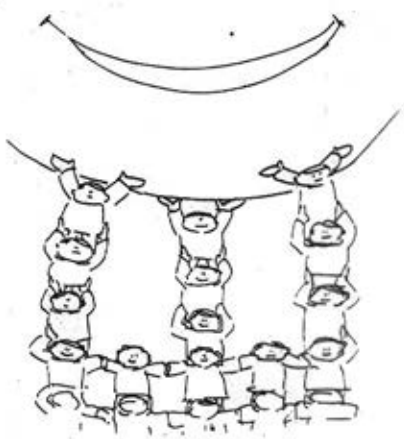

एक बार फिर जगत् शक्तिशाली, स्वस्थ और प्रसन्न हो गया – जैसा कि शुरू में था – आकाश की बुलंदी में जहां हर समय इस पर सूर्य चमकता रहता।

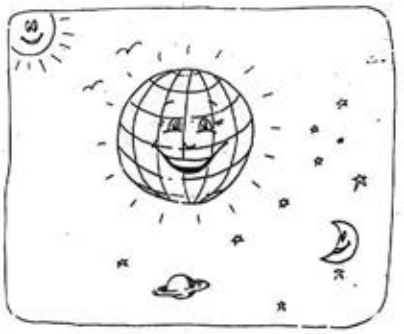

इतना ही नहीं, अब सारे संसार के लोग एक दूसरे के करीब आ गए और पहले से बेहतर समझने लगे। ऐसा लगा कि जैसे वे एक दूसरे से दूर चले गए थे। सब सहमत थे कि वे इतने व्यस्त हो गए थे कि वे जगत् को न के बराबर समझते रहे। वे एकमत थे कि ऐसा पुनः नहीं होने देंगे।

आखिर यह दुनिया उन की थी और उन सबके लिए ही बनी थी।

और इस प्रकार प्रारम्भ हुई "अखिल विश्व सहयोग प्रणाली।"

बीड – जिला न्यायालय में वकील संघ के हाल में वकीलों के साथ ज्ञान-चर्चा करते हुए ब्र० कु० आत्मप्रकाश तथा ब्र० कु० लता बहन जी।

धैर्यता की शक्ति

ब्र० कु० जगरूप, कृष्णानगर, देहली

वर्ष १९६५ में जब हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का आपस में भीषण युद्ध चल रहा था, तब मैं मिलिट्री में वायरलैस ऑपरेटर की ड्यूटी पर था। अचानक ही मुझे और मेरे एक साथी को आदेश हुआ कि अभी-अभी युद्ध स्थल में जाना है। आदेश सुनते ही हम दोनों तकरीबन १५ घंटे रेलगाड़ी के सफर के बाद रात्रि करीब ११.३० बजे युद्ध स्थल में एक गांव के पास पहुँचे। वह गांव पाकिस्तान का था परन्तु हिन्दुस्तान ने आक्रमण करके, हमारे पहुँचने से दो दिन पहले अपने कब्जे में कर लिया था। युद्ध स्थल में पहुँचते ही हम जमीन के अंदर खुदे हुए छोटे-छोटे कमरों में चले गये। पूरे इलाके में एकदम सन्नाटा था। प्रातः होते ही मेरे साथी ने कहा कि चलो गांव का चक्कर लगायें ताकि वायरलैस का स्थान भी देख लें और उजड़े गांव का नज़ारा भी देख लें! गांव के भीतर पहुँचते ही सामने एक बड़ा मकान था। हम उसमें घुस गये। मकान में घुसते ही दायें तरफ एक कमरा था, हम उसकी तरफ मुड़ गये। जैसे ही कमरे के गेट के पास गये तो देखा कि एक बुढ़िया जो करीब ६०-७० वर्ष की थी, जो कि शायद चलने में असमर्थ थी, हमें देखते ही जोर-जोर से चिल्लाई – "बेटा बचाओ, बेटा बचाओ, बेटा मेरी बात सुन लो।" यह आवाज सुनते ही मेरे साथी ने कहा – "जगरूप, इसका जल्दी इन्तज़ाम करो।" क्योंकि युद्ध स्थल के वातावरण के कारण बुढ़िया की आवाज़ सुनते ही मेरा साथी अपना धैर्य खो चुका था। मैं बुढ़िया की आवाज़ भी सुन रहा था परन्तु मेरी नज़र सामने दीवार पर लगे देवी-देवताओं के चित्रों पर लगी हुई थी। यह कुछ क्षणों का ही खेल था कि इतनी देर में मेरे साथी ने अपनी स्टेनगन में भरे २८ कारतूस फटाफट उस बुढ़िया पर दाग दिये। बुढ़िया के शरीर के दो टुकड़े हो गये। यह सब समाप्त होते ही उसकी नज़र सामने दीवार वाले चित्रों पर थी और मेरी नज़र बुढ़िया के शरीर के दो टुकड़ो पर थी। चित्रों को देखते ही वो बोल उठा – "ओ हो! बहुत बड़ा पाप हो गया! यह बुढ़िया तो बेचारी हिन्दुस्तानी थी।" परन्तु तब तक स्टेनगन से २८ कारतूस निकल कर अपना कार्य कर चुके थे, सिर्फ उसके पास पश्चात्ताप रह गया था।

इस प्रकार हमारे जीवन में बहुत-सी घटनाएँ आती हैं जो कि एक सेकण्ड के धैर्य की कमी के कारण स्वयं को और दूसरों को असफल बना सकती हैं। सफल तो क्या, एक सेकण्ड का धैर्य किसी को जीवनदान भी दे सकता है और एक सेकण्ड का अधैर्य मृत्यु तक भी पहुँचा सकता है। इसलिये कहावत मशहूर है कि बंदूक से निकला हुआ कारतूस, मुख से निकला हुआ बोल, कमान से निकला हुआ तीर, नदी के किनारे से निकला हुआ पानी कभी वापिस नहीं आते परन्तु अपनी प्रतिक्रिया अवश्य छोड़ जाते हैं। इसलिये हमें अपनी मनसा वाचा, कर्मणा की क्रिया से पहले एक सेकण्ड धैर्यवत् होकर क्रिया के आदि, मध्य व अंत को सोच लें तो वह धैर्यवत् का एक क्षण हमारे कर्म-फल में बहुत रस लायेगा, सुखदाई होगा और सिद्धि-स्वरूप होगा।

धैर्य की शक्ति बुद्धि के संतुलन को बनाती है और अधैर्य से बुद्धि का सन्तुलन बिगड़ता है। संतुलन में कल्याण है और असन्तुलन में अकल्याण है। करीब ७-८ वर्ष पहले की बात है यमुना नदी में बाढ़ के कारण दिल्ली में पानी ने अपना भंयकर रूप ले लिया। पानी की लहरें नदी के किनारों को तोड़ने के लिये ज़हरीले सांप की तरह फुंकारे मार-मार कर मचल रहीं थीं जिससे करीब १८ लाख की आबादी भयभीत थी। भयंकर रूप लिये पानी को देखने के लिये हजारों लोगों की भीड़ यमुना किनारे पर आती जाती थी। एक दिन भीड़ में से एक व्यक्ति पानी का भंयकर रूप देखकर घबराया और बिना देखे और सोचे मुख से आवाज करता हुआ कि – लोगो, यमुना का किनारा टूट गया भाग पड़ा। आवाज सुनते ही लोग अधैर्य हो उठे। भगदड़ मच गई। काफी नुकसान हुआ। काफी समय तक लोगों में मृत्यु का भय फैला रहा क्योंकि यमुना नदी के पानी का रूप ही सर्व को अपनी चपेट में लेने वाला था। परन्तु थोड़े समय के बाद जब सच्चाई का पता चला तो सभी की जान में जान आई। परन्तु यह सब कुछ एक सेकण्ड की धैर्यशक्ति की कमी के कारण हुआ।

धैर्यता की शक्ति एक महान् शक्ति है। **जैसे दृढ़ता सर्व गुणों की जड़ है, वैसे धैर्यता सर्व गुणों का फल है।** आत्मिक शक्ति की परख धैर्यता की शक्ति ही कराती है। किसी की सत्यता को जानने के लिये व किसी को सफल बनाने के लिये धैर्य का गुण ऐसे काम करता है जैसे भीषण गर्मी में वातानुकूलन। इसलिये हंसी में लोग कहते हैं कि किसी ने नाई (Barber) की दुकान पर जाकर पूछा 'मेरे बाल कितने बड़े-बड़े हैं?' नाई ने कहा – 'धैर्य रख तेरे सामने आ जायेंगे' तो धैर्यता की शक्ति सत्य और असत्य दोनों को स्पष्ट करती है। इसलिये स्वयं की सत्यता को दूसरों के आगे जिरह से सिद्ध न करो क्योंकि जिरह करने वाला न तो कभी सिद्ध कर सकता है, न कभी प्रसिद्ध हो सकता है। परन्तु धैर्यता की शक्ति के साथ स्वस्थिति में टिक कर हर परिस्थिति को हल कर सकते हैं, निवारण कर सकते हैं। धैर्यता खो कर किया हुआ कार्य पश्चात्ताप का रूप बनता

शेष पृष्ठ २९ पर

कहानी

शेर से जीतने वाला मकड़ी से पराजित

ब्रह्माकुमारी चक्रधारी, देहली

एक बार की बात है कि एक छोटे-से मच्छर का शेर से सामना हो गया। शेर गुर्राने लगा। वह मच्छर पर झपटने लगा। परन्तु मच्छर घबराया नहीं। वह शेर को चुनौती दे कर बोला—"भले ही तुम शेर हो परन्तु मैं "सवा सेर" हूँ। मैं तुम्हें ऐसा पाठ पढ़ाऊँगा कि सदा याद करोगे। मैं हूँ तो छोटा-सा पर तुम्हें तुम्हारी नानी याद दिला दूँगा। मैं वह कमाल करके दिखाऊँगा कि तुम सोचते ही रह जाओगे।

यह सुनकर शेर को बहुत ही गुस्सा आ गया। वह मच्छर पर बार-२ झपटता परन्तु मच्छर सदा उड़ कर उसकी पीठ की ओर हो जाता और बार-बार शेर पर आक्रमण करता। वह शेर को काटता —जिससे शेर को बड़ी बैचेनी होती। शेर उछल पड़ता और मच्छर को आघात पहुँचाने का यत्न करता परन्तु मच्छर उसकी पकड़ में ही न आता। वह कभी उसके मुँह पर बैठ कर काटता तो शेर मच्छर को मारने के लिए अपना पंजा अपने मुंह पर मारता परन्तु मच्छर उड़ जाता और शेर का पंजा लगने के कारण शेर का अपना मुँह ही लहु-लुहान हो जाता। इस प्रकार शेर और मच्छर की लड़ाई में मच्छर ने शेर को कुछ मिनटों में परास्त कर दिया। शेर थक कर और जख्मी होकर एक ओर पड़ा रहा।

अब इस मच्छर को बहुत अभिमान आ गया कि "मैं ही शेर-ए-हिन्द" हूँ। शेर को अपने प्रहार से ढेर कर देने वाला मैं "रुस्तम-ए-जहाँ" हूँ। वह इधर-उधर ऐसे उड़ने लगा कि जैसे वही विश्व का राष्ट्रपति हो।

परन्तु कहा गया है कि अभिमानी को आखिर उसका अभिमान अस्त कर देता है। मचल-मचल कर उड़ता हुआ आ रहा मच्छर बिना देखे समझे मकड़ी के जाल में घुस गया। ऐसा घुसा कि अब उसका निकलना ही उसके लिए सम्भव न रहा। वह जाले के जाल में ही पकड़ा गया अथवा उलझ गया। उसे वहाँ पतले-पतले धागों की कैद में बन्दी बना देख मकड़ी वहाँ आई और उसने मच्छर को दबोच लिया। बस, फिर क्या था कि मकड़ी ने उसको काल का ग्रास बना लिया। जो मच्छर शेर के सामने गुर्राता फिरता था उसे मकड़ी साबुत ही निगल गयी। उस दिन से यह कहावत चली आती है कि "शेर से तो बाज़ी जीत ली परन्तु मकड़ी से मारा गया।"

इसी प्रकार हम देखते हैं कि कई बार ज्ञानवान व्यक्तियों का भी ऐसा ही हाल होता है। आत्मा भी मच्छर के समान बहुत छोटी-सी और उड़ सकने वाली तो है ही। उस छोटी सी आत्मा के सामने शेर जैसी विकराल अथवा भयानक परिस्थितियाँ आ जाती हैं। महारथी आत्मा कई बार उन परिस्थितियों को तो पार कर लेती है परन्तु कई बार अपने ही विचारों के ताने बाने में उलझ जाती है। वह अपने ही पुराने संस्कारों के सूक्ष्म डोरों से मकड़ी के जाल की तरह एक जाल बुन कर स्वयं ही उसमें फँस जाती है और माया रूपी मकड़ी उसे साबुत ही निगल जाती है। अर्थात वह आत्मा जान से ही मर जाती है और माया का शिकार बन जाती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए ज्ञानवान आत्मा को चाहिए कि वह उस ताने-बाने को बुनकर उस जाल में न फंसा करे।

जबलपुर में आयोजित 'राजयोग-शिविर' में नगर के प्रतिष्ठित व्यक्ति पधारे। चित्र में ब० कु० शील बहन उन्हें राजयोग की विधि बता रही हैं।

नारी, तू कल्याणी बन!

जिस बच्चे को माँ नौ मास तक अपनी देह में धारण किये रहती है और फिर जन्म लेने पर उसका लालन-पालन करती, उसे नहलाती-धुलाती संवारती-सुधारती और लाड-प्यार देकर, बोलना चलना सिखा कर बड़ा करती है, उस माता से स्नेह न करने वाला तथा उसका कहना न मानने वाला तो संसार में कोई विरला ही कृतघ्न बच्चा होता होगा। परन्तु यदि माँ स्वयं बच्चे को बोलना तो सिखा दे परन्तु 'क्या बोलना है और क्या नहीं बोलना', यह न सिखाये, अर्थात् यह न समझाये कि मीठा बोलना है, कड़वा नहीं बोलना, सत्य बोलना है, असत्य नहीं बोलना, स्वयं को "आत्मा" मान कर शालीनता से बोलना है, 'देह' मानते हुए नहीं बोलना, आदि तो मानो कि माँ स्वयं ही अपना कर्तव्य पूरा नहीं करती। इसी प्रकार, जो माता अपने बच्चे को अंगुली का सहारा देते हुए खड़ा करके चलना सिखाने की चिन्ता और मेहनत तो करती है परन्तु जीवन की किस राह पर और कैसे चलना है, अर्थात् मानव का चाल-चलन कैसे हो, यह नहीं सिखाती, वह भी अपने कर्तव्य को ठीक रीति से नहीं निभाती। जो बच्चे का जन्म होने पर उसकी जिह्वा पर शहद रखती या शहद से ओम तो लिखवाती है परन्तु उसे 'ओम्' के अर्थ स्वरूप में नहीं टिकाती या उसके स्वभाव एवं वाणी में शहद जैसी मधुरता नहीं भरती, वह भी गोया अपना फ़र्ज पूरा नहीं करती। जो माता बच्चे को स्कूल में सांसारिक विद्या पढ़ने के लिये तो तैयार करती, तन-मन-धन लगाती और उसे स्कूल जाते देख कर खुश भी होती है परन्तु बच्चे को सदा खुश मिज़ाज, खुशहाल और खुशदिल बनाने वाली आध्यात्मिक विद्या नहीं पढ़ाती, वह भी गोया उससे सच्चा स्नेह नहीं करती और उससे सच्ची मित्रता नहीं निभाती क्योंकि वह बच्चे के जीवन की ठीक एवं सुदृढ़ नींव नहीं रखती। शरीर के विकास पर ध्यान देते हुए भी जो माँ बच्चे की आत्मा के अथवा चरित्र के विकास पर ध्यान नहीं देती गोया वह बच्चे, परिवार, समाज तथा संसार के प्रति अपने आवश्यक कार्य की अवहेलना करती है क्योंकि ऐसा बच्चा बड़ा हो कर सुखमय जीवन जीने की कला न जानने के कारण स्वयं भी अशान्ति का अनुभव करता है और संसार में भी अशान्ति ही फैलाता है। अतः महिला, ओ माता, तुम्हें यह तो याद रखना चाहिये कि तू ही मानव का पहला गुरु है, तू ही जग-जननी है। अतः अब जग-जननी बन, तू कल्याणी बन, तभी इस जगत का कल्याण होगा।

कौन कहता है कि नारी अबला है? जिसने बड़े-बड़े चक्रवर्तियों और छत्रपतियों को अपनी गोद में लेकर खिलाया और उन्हें संस्कारी बनाया, जिस माता ने करोड़ों लोगों के मन पर शासन करने वाले ध्रुव, शंकराचार्य, ईसा मसीह, महात्मा गांधी आदि जैसे पुरुषों को धर्म का पहला पाठ पढ़ाया, जिस माता ने श्रीकृष्ण और श्री राम-जैसे देवताओं को जन्म दिया, उस माता को "अबला" कौन कह सकता है? शताब्दियों से "अबला, अबला" कह कर ही नर ने नारी को अबला-सा बना दिया है। वर्ना नारी तो अपने वास्तविक स्वरूप में "शिव शक्ति" है और देवी है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से तो हरेक आत्मा "पुरुष" है और शरीर 'प्रकृति' है। अतः अपने लक्ष्य को जान कर उसकी प्राप्ति के लिये पुरुषार्थ करने वाली नारी भी "पुरुष" ही है। इसलिये महिला, ओ माता, तू अपने शुद्ध-स्वरूप को जान कर स्वयं को सबला मानते हुए अपना कर्तव्य रूप शस्त्र उठा और ललकार कर! तू अबला नहीं, कल्याणी है, अब तू जगदम्बा-सम कल्याणी बन।

नर तुझे "अबला" कहें-यह तो घोर अनर्थ है। तुझे "नरक का द्वार" कहें- यह तो अन्धकार है। हाय, तुझे वे "विषय की गुड़िया" समझने लगें, यह तो अत्यन्त पापाचार है। यह तो मानवता पर धिक्कार है, कलंक है। नारी तू अनसुइया बन। ब्रह्मा, विष्णु शंकर भी जिसे "माता" कहें तू वह तपस्विनी बन। तू योगाग्नि की ज्वाला बन। "नरक का द्वार" कहने वाले अपकारियों पर भी ज्ञान द्वारा उपकार करके तू जगत-उद्धारक बन। तू कमल पुष्प-सम पावन बन कर विश्व-कल्याणी बन।

नारी तू हदों को तोड़! तू संकीर्णता को अब छोड़! तू विकारों से मुख मोड़! स्वयं को जगत की माता समझ। क्या लाखों-करोड़ों लोगों की क्रन्दन-ध्वनि तुम्हारे कानों में नहीं गूँजती? "माँ, ओ ज्योतियों वाली माँ"— क्या ऐसी पुकार तुम्हें सुनाई नहीं देती? बच्चे रात-रात भर जागरण कर तुझे पुकारते रहें और तेरी जय बोलते रहें, तब तुझे नींद कैसे आ सकती है? अब उठ, जाग, पहले अपनी ज्ञान-ज्योति जगा, स्वयं जगत-माता रूप धारण कर के मनोविकारों पर विजय प्राप्त कर और भक्तों को अपने दैवी रूप का साक्षात्कार करा। अब तू वरदानी बन, ओ माता, अब कल्याणी बन!

क्या तू यह तो नहीं सोचती कि "ज्योतियों वाली माता" कोई और है? कमल पुष्प-निवासिनी, वीणा वादिनी, असुर-संहारिणी देवी रूपा नारी तो चिरातीत में हुई है और कि तू वह नहीं है? यही तो वास्तव में तुझे अपने मातृ स्वरूप की विस्मृति है जिसके परिणामस्वरूप आज जगत का यह हाल हुआ है। उठ अब अपने स्वरूप को पहचान, अब वीणा को हाथ में ले और जगत को ईश्वरीय विद्या से मधुर गीत सुना कर आनन्द-विभोर कर दे!

अच्छा, अगर तू वह देवी नहीं भी है तो उनकी सन्तान तो है? क्या हंस का वंशज हंस, कोयल की सन्तान कोयल नहीं होती? अतः वास्तव में तू देवी और देवताओं ही की वंशज है, इसलिये ही तो भारत की नारियों के नामों में "देवी" शब्द का प्रयोग होता है और मंच से वक्ता लोग महिलाओं को "देवी" कह कर सम्बोधित करते हैं। पुनश्च इसलिये ही तो भारत की नारियों के नाम चिरातीत से शान्ति, सन्तोष, सरला, प्रेम आदि-आदि किसी दिव्यगुण ही को लेकर रखे जाते हैं। अतः वास्तव में तेरा आदि स्वरूप देवी ही है, तू अपनी वास्तविकता (असल) और वंश (नसल) को जान। उठ कर ज्ञान की ज्योति लेकर जन-जन की आत्मिक ज्योति जगा! अब इस सृष्टि रूपी वृहद घर में घटाटोप अन्धकार है, अब तो तू ज्योति द्वारा अंधकार को मिटा। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, हिंसा आदि आसुरी लक्षण उत्पात मचा रहे हैं और उनसे पीड़ित होकर संसार त्राहि-त्राहि कर रहा है, अतः अब तो तू दुर्गा बन कर इस आसुरियता का नाश कर। क्या तुझ से ऐसे घोर पतन तथा अकल्याण की स्थिति देखी जा सकती है? उठ, अब तू पवित्रता धारण करते हुए धवला सरस्वती बन। कमल-सम न्यारे जीवन रूपी आसन पर स्थित होकर शिव की स्मृति में निमग्न होकर तपस्विनी बन और इन दोनों का वर दूसरों को देने वाली वरदानी बन, अब तू कल्याणी बन!

जब घर में वधू आती है तब क्या लोग यह नहीं कहते कि घर में "लक्ष्मी" आई है? क्या भारत की चिरकालीन प्रथा के अनुसार नारी को "गृह लक्ष्मी" की संज्ञा नहीं दी जाती? अतः तेरा ही तो आदि स्वरूप लक्ष्मी है जो लक्ष्य में स्थित होती है और दिव्यगुण धारण करती है वही तो लक्ष्मी देवी है। इसीलिये ही तो लोग कहते हैं कि नर तू ऐसा कर्म कर जिससे नारायण बने और नारी तू ऐसा कर्म कर जिससे लक्ष्मी बने।" अतः बहुत समय बीत गया, अब तो तू अपने लक्ष्य में स्थित हो और ऐसे श्रेष्ठ कर्म कर कि जिस से तू साक्षात लक्ष्मी बने। कमल पुष्प-सम जीवन होने के कारण ही तो लक्ष्मी का नाम "कमला" भी है। अतः अपने जीवन को पुनः कमल पुष्प के समान बना। इस विधि से ही यह भारत पुनः स्वर्ग बन जायगा और यहाँ पुनः श्री लक्ष्मी और श्री नारायण का राज्य होगा। अतः अब स्वयं को भविष्य की लक्ष्मी समझ कर और अतीत की देवी मान कर मन को वरद मुद्रा में रखते हुए सभी को लक्ष्य में स्थित करने की सेवा कर। इस प्रकार ही यह कलियुग जायेगा और सतयुग आयेगा। इस लक्ष्य की सिद्धि के लिये तू योगिन बन, ज्ञानी बन!

काली द्वारा जिन महिषासुर, रक्त बीज त्रिपुरासुर आदि असुरों के संहार का आज भी गायन है, वे असुर कोई भयावह आकृति वाले किसी विशेष जाति के व्यक्ति थोड़े ही थे। 'महिषा' तो अविवेक की अथवा मन्दबुद्धि की प्रतीक है, उसकी कालिमा मनोविकारों द्वारा एकत्रित हुई कालिमा की द्योतक है, और उसके हाथ में शस्त्र आत्मा को दुःख पहुँचाने वाले प्रभाव के संकेतक हैं। "रक्तबीज" नाम नस-नस में खून की हर बून्द में घुसी आसुरियता का बोधक है, अर्थात क्रूर दुर्गुणों का परिचायक है। यह आसुरियता आज ऊपर नीचे सब जगह तीनों पुरों में फैल गयी है। अतः ऐसी आसुरियता का अन्त करना ही गोया महिषासुर, रक्तबीज त्रिपुरासुर आदि असुरों का संहार करना है। जो इस आसुरियता को काल का ग्रास बनाने वाली, अर्थात् इन्हें मार मिटाने वाली है, वही तो "काली" है। ऐसी माता, जो मनोविकारों तथा दुर्गुणों को मार कर समाप्त कर देती है, वही तो वास्तव में "काली माँ" है। अथवा दुर्गा है। "काली माँ" "दुर्गा" अतीत में हुई केवल किसी एक माता का संज्ञावाचक नाम नहीं है बल्कि यह तो कर्तव्य-वाचक नाम है। हरेक ऐसी माता जो अपने मन से तथा जन-जन के मन से अविवेक और आसुरियता को मिटाती और विश्व को इनके अभिशाप से मुक्त करती है, वह "काली माता" अथवा "दुर्गा" है। जो माता ब्रह्मा, विष्णु और शंकर नामक त्रिदेव के गुणों को धारण करती हुई तथा परमपिता परमात्मा शिव से योग द्वारा आध्यात्मिक शक्ति लेती हुई संसार में जन-जन को आसुरियता के उत्पाद से मुक्त करती है, वही असुर-संहारणी और दुःख निवारिणी 'शिव-शक्ति' है। अतः नारी अब तू ऐसी तरन-तारिणी, दुःख निवारिणी, असुर संहारिणी और कल्याणी बन।

"शिव" कौन है? जो सभी का कल्याण करता है, वही 'शिव' है। सभी का कल्याण कौन करता है? जो स्वयं सदा कल्याण-स्वरूप है, सदा सर्व बन्धनों से मुक्त है, ज्ञान का सागर, शान्ति का सागर, आनन्द का सागर एवं परम पवित्र है-वही शिव है। ये सभी गुण तो एक परमपिता परमात्मा ही के हैं। अतः परमपिता परमात्मा ही का नाम "शिव" या "सदा शिव" है परन्तु परमात्मा तो जन्म-मरण से न्यारा, देह-मुक्त, शारीरिक आकृति से रहित, ज्योतिस्वरूप है। अतः "शिव" नाम किसी सूक्ष्म

शरीरधारी देवता का नहीं है। 'शिव' तो शंकर से भिन्न, देवों का भी देव है। वह ज्योति-बिन्दु है जिसकी ही वृहद आकृति शिवलिंग, अर्थात् स्त्रीलिंग और पुल्लिंग से भिन्न 'ज्योतिर्लिंग' नामक प्रतिमा मन्दिरों में बनी होती है। वह शिव, पतियों का भी पति है। उस एक शिव ही की बुद्धि में पावनकारी स्मृति को धारण करना, उसमें ही मन लगाना, उस ही से अनन्य प्रीति जोड़ना 'योग' है। जिस के द्वारा नारी "शिव शक्ति" बनती है। यदि वह अबला हो तो सबला बनती है। उसी लक्ष्य द्वारा ही वह नारी से श्री लक्ष्मी बनती है। उस ज्ञानेश्वर के ज्ञान द्वारा ही वह विद्या-दायिनी सरस्वती बनती है। हे माता, अब तू शिव से मन की प्रीति जोड़ कर, शिव से बुद्धि की लगन लगा कर अर्थात् शिव की स्मृति को धारण कर, "शिवशक्ति" बन। इस विधि ही अपना तथा जग का कल्याण करने के निमित्त बन।

आज प्रायः सभी का तन-मन विकारों की सूक्ष्माग्नि से सूक्ष्म ताप में जल रहा है। इसी का परिणाम अशान्ति है। विकारों की अग्नि को बुझा कर आत्मा को शान्त करने से ही ये शीतल हो सकते हैं और तब ही नारी शीतला बन सकती है। आज मनुश्य की अनगिनत इच्छाएं हैं जिनकी पूर्ति युग-युग में मनुष्य को सभी प्रकार के धन-पदार्थ, मान-सम्पदा मिलने से भी नहीं हो सकती है। केवल प्रभु-प्राप्ति अथवा सहज राजयोग द्वारा पवित्रता और आनन्द की प्राप्ति ही ऐसी प्राप्ति है जिससे कि आत्मा सन्तुष्ट हो सकती है। तभी वह सन्तोषी बन सकती है। परन्तु विकारों की अग्नि को बुझाना, मन को शीतल करना तथा आत्मा को आनन्द-विभोर कर के तृप्त एवं सन्तुष्ट करना ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग ही की प्राप्ति से सम्भव है। अतः अब तू उस ज्ञान को धारण कर, उस योग का अभ्यास कर के शीतला माता बन और सन्तोषी माँ बन। नारी तू इस विधि कल्याणी बन।

मां की ममता, बच्चों के प्रति संवेदनशीतलता और करुणा जगत-प्रसिद्ध है। सभी मानते हैं कि नारी में त्याग, सेवा भाव, सहनशीलता और समायोजन की क्षमताएं विशेष होती हैं। नारी, अब तू उन्हीं विशेषताओं का विकास कर उन्हीं को दिव्य एवं अलौकिक बना, उन्हीं को केवल कुछेक दैहिक सम्बन्धियों के प्रति प्रयोग करने की बजाय मानव मात्र के प्रति प्रयोग कर। अब अपने सेवा भाव को इस विश्व रूपी कुटुम्ब की आध्यात्मिक सेवा में लगा, अर्थात् जन-जन में ज्ञान और गुणों को भरने के अति शुभ कार्य में लगा दे। अब अपनी त्याग की क्षमता को मनोविकारों तथा देहाभिमान के त्याग में अथवा 'उपाधि तथा प्रसिद्धि' की प्राप्ति की कामना के त्याग में लगा दे। तू अपनी संवेदनशीलता और करुणा को जगत की दुःखी आत्माओं को अज्ञान के अभिशाप से छुड़ाने और विकारों की दलदल से निकालने में लगा। तू ममताशील है, अपनी ममता को समूचे जगत के प्रति व्यक्त कर। हे नारी, तुम में जो समायोजन की क्षमता है, उससे तू मनुष्य में स्थायी रूप से सह-अस्तित्व की योग्यता को उभार। अपनी इन स्वभाव-जन्य विशेषताओं का अथवा इन गुणों का विकास एवं दिव्यीकरण करते हुए अब तू महादानी बन। माता, अब तू कल्याणी बन।

भारत की नारी में समर्पण भाव की तथा उसके पतिव्रता होने की विशेषता सभी को ज्ञात है। उसके समर्पण भाव और त्याग के सामने सभी हार मान जाते हैं। उसकी अतुल सहनशीलता के कारण ही परिवार छिन्न-भिन्न नहीं होते और कुटुम्ब के सदस्य एक-दूसरे के साथ जुटे रहते हैं। सगाई के समय से लेकर ही उसका समर्पण भाव उभर कर पूर्ण "शरणागति" का रूप ले लेता है और तब उसका पतिव्रता धर्म उस की अनमोल चारित्रिक पूंजी बन जाता है। नारी के इन गुणों का जग गायन करता है। इन्हीं के आधार पर नारियों का इतिहास में उल्लेख है। अतः नारी, अब तू पतियों के भी पति परमात्मा के प्रति मन को समर्पित करके सही अर्थ में पतिव्रता नारी बन। अब तू संसार में नैतिक नियमों तथा मानवी मूल्यों की पुनः स्थापना के ईश्वरीय कार्य में सहयोग देती हुई आसुरी वृत्ति के लोगों की कटु आलोचना, उनके व्यंग और उन द्वारा किये गये अत्याचार को सहन कर, उनका सामना कर और उस अग्नि-परीक्षा को पार करती हुई सच्ची सीता तथा सावित्री बन। उठ, अब तू अपने स्वमान को जान और अपने कर्त्तव्य को पहचान। आत्मा के स्वामी परमात्मा से मन का नाता तोड़ने से ही आत्मा का घोर पतन हुआ है। परमात्मा रूप पति के प्रति व्रत तोड़ने से हरेक की बुद्धि व्यभिचारी अर्थात् अवस्था विकारी हुई है। अतः नारी, तू परमेश्वर रूप पति से प्रीति जुटा कर पावन बन और जग-कल्याणी बन।

चिरकाल से नारियों को यह कहा जाता है कि 'पति ही नारी का गुरु है' और 'पति ही नारी का परमेश्वर है।' परन्तु परमेश्वर तो परम-पवित्र है और 'पतित-पावन' है। तब क्या जो नर स्वयं पतित हो और नारी को भी पतित बनाता हो, उस पर काम का कुठाराघात करता हो और उसे देह-अभिमान के गर्त में डालता हो, वह भी परमेश्वर है? निस्सन्देह, श्री नारायण और श्री राम जैसा पतितो 'पति देव' है परन्तु क्या कामातुर, विकारों का गुलाम, मद्य के नशे में सुधि-बुद्धि विहीन, नारी पर अत्याचार और उससे बलात्कार करने वाला पति भी 'गुरु या परमेश्वर' है? गुरु तो गति और सद्गति देने के निमित्त और अध्यात्मिक ज्ञान देकर पवित्रता की ओर ले जाने के निमित्त होता है और

परमेश्वर की तो सभी प्रार्थना करते हैं कि– "हे प्रभो, विषय विकार मिटाओ और पाप हरो।" अतः वास्तव में सत्यता तो यह है कि परमेश्वर ही सभी आत्माओं का पति, सभी सीताओं का राम है। वही सभी का सद्गुरु है जो सभी आत्माओं को अन्धकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य और सतोगुण की ओर तथा मृत्यु से अमृतत्व की ओर ले जाता है। पतिव्रता नारी का एक परमेश्वर ही गुरुओं का भी गुरु, सभी का सद्गुरु है। अतः उसके बताये हुए सन्मार्ग पर चलने से ही तेरा भी कल्याण होगा। उस द्वारा अपना कल्याण करते हुए तू कल्याणी बन।

संसार में जिस नर-रूप देहधारी से पति का नाता और देह-धारियों से माता का नाता जुटा है, तू उनकी सेवा कर, उनको स्नेह तो दे परन्तु साथ-साथ उनको भी आत्मिक दृष्टि से देखते हुए उनके कल्याण के निमित्त भी बन। एक परमात्मा ही की स्मृति में स्थित होकर भोजन को "प्रसाद" की तरह पवित्र करते हुए तू उनके मन को भी पवित्र बनाने के लिये निमित्त बन। घर में श्री लक्ष्मी, श्री नारायण, श्री सीता, श्री राम और सरस्वती आदि के ही चित्र लगा कर, घर में शालीनता, सच्चरित्रता और पवित्रता का वातावरण बनाते हुए गृहस्थ को गृहस्थ-आश्रम बना। तू सभी को प्रभु से प्रीति करने की शिक्षा दे। माता, अब तू ही गुरु का कर्त्तव्य निभा। जो माता बच्चों को ज्ञान की लोरी देती है, वही सुमाता है, जो पत्नि पति को धर्म के पथ से भ्रष्ट नहीं होने देती, वही "धर्म पत्नी" है। जो गृहस्थ को गृहस्थ-आश्रम मानकर आदर्श जीवन व्यतीत करती है वही आदर्श नारी है। अब तू आदर्श नारी बन,सत्यवान की सावित्री बन। तू सच्ची मीरा बन।

कहा गया है कि जहां नारियों की पूजा होती है, वहाँ ही देवता विचरण करते हैं। सतयुग में यही भारत देवी देवताओं का देश था। वहाँ नारी का सम्मान होता था। आज भी 'श्री नारायण' से पहले 'श्री लक्ष्मी' और 'श्री राम' से पहले 'श्री सीता' का नाम लिया जाता है। परन्तु तब नारियाँ भी दिव्यगुणों से सम्पन्न अर्थात "देवियाँ थीं। अतः अब तू पुनः दिव्य गुण सम्पन्न बन और दूसरों में भी दिव्यगुण भरने के निमित्त बन तो यह भारत पुनः देवी-देवताओं का देश बनेगा और यहां सतयुग आयेगा। तब पुनः यहाँ नारी का सम्मान होगा और हर पुरुष भी महान होगा। अतः उठ, अब तू महान बन, स्वमान में स्थित हो और सतयुग की ओर अपने कदम बढ़ा।

नारी तू बलिदानी है। दूसरों का दुःख तुझ से सहन नहीं होता और तू सभी बच्चों की सुख-सुविधा के लिये अपना सब-कुछ बलिदान करने को उद्यत होती है। अतः अब तू इन विकारों को शिव पर बलिदान कर। तब जन-जन तुझ पर भी अपनी इन कलुषित वृत्तियों का बलिदान करेगा। आज भी तो भक्तजन देवियों पर बलिदान करते हैं परन्तु वे अपने अहंकार की बलि देने की बजाए बेचारे बकरे को बली चढ़ाते हैं क्योंकि वे नहीं जानते कि तू देवी, वास्तव में देहाभिमान की बली पसन्द करती है। अतः तू पहले अपने मन से "मैं-मैं" की बलि परमात्मा शिव पर चढ़ा। तभी तू भक्तों के भी अहं-भाव की बलि स्वीकार कर उन्हें वरदान दे सकेगी।

आज भक्त-जन पावन होने के लिये गंगा में स्नान करने जाते हैं। परन्तु पावन होने की उनकी वह भावना पूर्ण नहीं हो पाती क्योंकि पतित पावनी तो वह ज्ञान-गंगा है जो शिव से उतर कर माता-रूप लेकर ज्ञान-प्रवाहित करती रही उसी की स्मृति में ही तो आज लोग गंगा को "गंगा मैया" कहते और गंगा की मूर्ति भी बनाते हैं। अब तू परमपिता शिव का पावनकारी ज्ञान प्राप्त कर के गंगा रूप बन,तू पतित पावनी बन।

जो पतितों को पावन करने वाली हो, उसके पास अपवित्रता कैसे आ सकती है? उसके निकट निकृष्ट एवं तामसिक भोजन, दूसरों को सता कर कमाया हुआ धन, आसुरी अथवा म्लेच्छों द्वारा प्रयोग होने वाले व्यसनों के पदार्थ कैसे आ सकते हैं? अतः पतित-पावनी माता, अब तू घर-घर का उद्धार कर। तू घर-घर को पावन बना। तू हर घर से मांस, मदिरा, बीड़ी और सिग्रेट ,भ्रष्टाचार से कमाया हुआ धन,शृंगार को वर्जित कर। इस संसार रुपी वृहद घर में तेरे जो ये सभी लाल हैं इनको इन व्यसनों के गर्त से निकाल। यह जिन्हें जल समझकर मरुस्थल की ओर भाग रहे हैं उस मृगतृष्णा के मायाजाल से तू इन्हें निकाल। जिन व्यसनों की जंजीरों में ये शताब्दियों से जकड़े हुए हैं, अब तू उन्हें तोड़ कर इन्हें मुक्त होने में सहयोग दे। ये जिन विकारों के अंगारों पर जल रहे हैं, अब तू इन्हें भस्मीभूत होने से बचा ले। इसके लिये तू इनके अन्न, धन और मन को पवित्र कर। माता, अब तू जन-जन के लिये वरदानी बन, कल्याणी बन।

देख तो आज तेरी नारी जाति ही कैसी शृंगार कर रही है। वह शृंगार करके नर जाति में कैसे कलुषित विचारों को भड़काने और उन्हें अपवित्रता की दलदल में फँसाने की निमित्त बन रही है। अतः अब तू जाग, शक्ति-रूपा बन। तेरे शृंगार तो तेरे सद्गुण हैं। तेरा सौन्दर्य तो चरित्र की पवित्रता और मुख पर हर्ष की लालिमा है। दिव्यगुण ही तेरी सुगंध है। इन्हीं श्रृंगारों पर जग आकर्षित और हर्षित होता है और इन्हीं से ही सभी का उत्कर्ष होता है। अतः तू सादगी, सरलता, स्वच्छता, स्नेह और सन्तोष का ही शोभनीय एवं अति सुन्दर शृंगार कर।

विद्यार्थियो, इन्हें अपनाओ और सदा सुख पाओ!

विद्यार्थियो, क्या आप ये महसूस करते हो कि अध्ययन-काल ही जीवन का सर्वश्रेष्ठ समय है क्योंकि यह ऐसा समय है जिसमें अभी मनुष्य, जीवन की अधिक पेचीदगियों में नहीं उलझा होता। यह सरल स्वभाव से लिखने-पढ़ने खेलने-कूदने, खुशी-मौज मनाने और अधिक निश्चिन्तता से रहने का समय होता है। इस पर भी विशेष बात यह है कि यह ब्रह्मचर्य का जीवन-काल है। जिसमें विद्यार्थी महात्माओं के समान होता है और अपने घर की आशाओं का दीप, देश और समाज की कल की उम्मीद और मानव समाज का सबसे मूल्यवान साधन होता है जिसके विकास में समाज को रुचि होती है और जिसकी उन्नति से राष्ट्र को गर्व होता है। अतः आप खिलते हुए फूलों को, मुस्कराते हुए आप के चेहरों को, उमंग-उत्साह के आप के झरने को और आपके कर्म रूप में बहती आपकी उर्जा अथवा शक्ति की सतत धारा को देखकर, हरेक के मन को हर्ष होता है– हर्ष ही नहीं बल्कि, प्रौढ़ और वृद्ध लोग तो कभी-कभी यह भी सोचते हैं कि हमारे जीवन के भी वो दिन कितने अच्छे थे! गोया ये दिन जीवन के स्मरणीय दिन होते हैं। इसलिये ऐसे मासूम और विकासशील जीवन के लिये आपको मुबारिक और प्रौढ़ तथा वृद्ध-जनों का आशीर्वाद और माता-पिता, अभिभावकों तथा सम्बन्धी-जनों का हार्दिक स्नेह तथा शुभ-भावना तथा मंगल-कामना।

शुभ-भावना, शुभ-कामना और शुभाशिष के साथ-साथ कुछ ऐसे शुभ सुझाव भी अपको हम देना चाहते हैं जो आपके जीवन को अधिक सफल बनाने में, आपके भाग्य के निर्माण में, आपके विकास की सम्पूर्णता में और जीवन-लक्ष्य की सिद्धि में शायद आपको सहायक हों। विद्यार्थियो, यह आपके लिये कोई आदेश, निर्देश या उपदेश नहीं है बल्कि कुछ अनुभवों की सार-सुरभि है। यह तो आपके लिये कुछ नज़राने अथवा कुछ स्नेह-भेंट है और स्नेह-भेंट, चाहे अनमोल न भी हो, स्वीकार तो की ही जाती है। ये तो आपकी जीवन में आदर्शवादिता और उच्चतम को पाने की इच्छा को देखकर आपके लिये कुछ शब्द सुमन हैं। ये तो आपके लिये ही प्रभु-प्रदत्त अमानत है अथवा मानव मात्र के व्यावहारिक जीवन-दर्शन की विरासत है जो हम आप तक पहुँचाना चाहते हैं। अतः विद्यार्थियो, इनकी सुगन्धि लेने की कोशिश करना और इनको प्रयोग में लाने का यत्न करना और उसके बाद देखना कि क्या रंग खिलता है। हमारा यह सुझाव है कि आप इन्हें अपनाओ और सदा सुख पाओ!

विद्यार्थियो, आपका मुख्य कार्य है– पढ़ना और लिखना जिसका उद्देश्य है सत्य को जानना, संसार में जो कुछ होता है उसके कारण को ढूँढ़ निकालना, खोज करके वास्तविकता तथा तथ्य तक पहुँचना, जानने की जो स्वाभाविक इच्छा अर्थात जिज्ञासा है उसको तृप्त करना और इस प्रकार अंधकार से प्रकाश की ओर जाना। जबकि आपके विद्या-अध्ययन के उद्देश्यों में से पूर्वोक्त उद्देश्य भी महत्वपूर्ण हैं तो फिर जो कुछ पढ़ते हो उस पर विचार करो, उसका मनन करो, उसकी सत्यता-असत्यता पर निष्पक्ष भाव से चिन्तन करो। यदि वह अनुभव, विवेक अथवा युक्ति के आधार पर सत्य मालूम होता है तो उसे स्वीकार करो। यदि वह असत्य विदित होता है तो उसका परित्याग करो और यदि आपके पास उसकी जांच करने का कोई साधन नहीं है तब उसको पढ़,सुन और समझ तो लो परन्तु उसके लिये कोई निश्चित मत और दृढ़ विचार मत बनाओ तथा उसके विषय में कट्टरपंथी मत बनो। बल्कि यह सोच लो कि अभी इसकी गहराई में जाना बाकी है। तब तक यह सोच लो कि यह सत्य भी हो सकता है और असत्य भी। वर्तमान काल में आप उसके प्रति तटस्थ रहो।

संसार में कुछ विषयों पर अनेक मत हैं। बड़े-बड़े बुद्धिजीवी, विद्वान अथवा विचारक इन विषयों पर अलग-अलग विचार व्यक्त करते हैं। उनमें से हरेक चिंतक अथवा विचारक अपने-अपने मत को प्रतिपादित अथवा सिद्ध करने के लिये तर्क, उदाहरण और दूसरों के शोध कार्य तथा उनकी रचनाओं के हवाले भी देते हैं। यदि उनको बताने वाला व्यक्ति विवेकशील, चरित्रवान, निस्वार्थी, निष्पक्ष और अनुभवी है तो उसकी बात ठीक होने की संभावना तो है परन्तु फिर भी आप उस पर स्वतंत्र रूप से विचार करो। विद्यार्थियों, इस विषय में कभी भी पक्षपात मत करो, भावुक मत बनो। पूर्वाग्रह, दुराग्रह और संकीर्णता को छोड़ कर सत्य को ग्रहण करने की चेष्टा करो। क्या आप देखते नहीं कि आज संसार के कई क्षेत्रों में पूर्वाग्रह, हठवाद, रूढ़ीवाद, कट्टरवादिता तथा संकीर्णता के कारण ही वैर-वैमनस्य, रगड़े-झगड़े, खून-खराबा तथा मार-धाड़ का वातावरण बना हुआ है। अतः आप उदार

मन से और खुले दिल से केवल सत्य को ही नहीं बल्कि परम सत्य, शाश्वत सत्य और सार्वभौम सत्य को भी जानने का यत्न करो, तभी जिज्ञासा, जो कि सब विद्याओं की जननी है, की सच्चे अर्थ में सन्तुष्टी होगी। विद्यार्थियों, आप ऐसा सत्य जानने की कोशिश करो जो साथ-साथ "शिव" अर्थात कल्याणकारी भी हो और 'सुन्दर' भी हो अर्थात् मन के मैल को धोकर उसे उज्ज्वल बनाने वाला, चरित्र के दोष मिटाकर उसमें सुन्दरता को निखारने वाला और अन्धकार एवं तम को भगा कर जीवन को आलोकित करने वाला हो। विद्यार्थियो, ऐसे सत्य को जानो, अपनाओ और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियों, विद्यार्थी जीवन में मन लगा कर विद्या ध्ययन करने के अतिरिक्त जीवन की नींव को सुदृढ़ बनाने के लिये आवश्क है—ब्रहमचर्य, पवित्र भोजन, स्वास्थ्य और चरित्र। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करता, अर्थात अपने में कलुषित विचार लाता है, वह शरीर और मस्तिष्क के विकास के लिये आवश्यक रासायनिक तत्वों का तथा मूल्यवान शक्ति का क्षय करता है। जो सात्विक एवं शाकाहारी भोजन न लेकर तामसिक भोजन लेता है, अधिक मिर्च-मसाले, ज्यादा खट्टी, बासी या अधिक वायु तथा ताप पैदा करने वाली एवं उत्तेजक खाद्य पदार्थों का सेवन करता है, वह संसार में सफलता और सुख के साधन रूप शरीर को बिगाड़ बैठता है तथा मस्तिष्क का सन्तुलन भी खो बैठता है और अपने मन में पाशविक एवं राक्षसी वृत्तियों को जन्म देता है। जो बुरे दोस्तों के संग में, बुरे नावल आदि पढ़कर या पतनकारी चल-चित्रों को देखकर अपने चरित्र को गँवा बैठता है, वह तो गोया स्वयं ही अपने भविष्य को अन्धकारमय बनाता है क्योंकि लोग उसे दुष्नाम देते हैं, समाज उसे अपराधी तत्वों में गिनता है, उसके कुल के लोग उसके कारण लज्जा अनुभव करते हैं और वह अपनी सम्पत्ति या आय को भी एक दिन लुटा बैठता है। वह या तो जेल की हवा खाता है या पुलिस की सूची में उसका नाम आ जाता है। और वह स्वयं भी सब-कुछ गँवा कर होश में आता है, परन्तु तब तक देर हो चुकी होती है। अतः, विद्यार्थियो, जीवन में इन दोनों कुसंगों से अपने चरित्र की रक्षा के लिये तुम स्वयं ही रखवाले बनना। ऐसे सहपाठियों या पड़ोसियों की कभी दोस्ती न करना जो तुम्हारे इस मानवी जीवन को ही निम्न मूल्य का बनाने रूप शत्रुता करें या तुम्हारे चरित्र को ही मिटा दें। ऐसा मीठा ज़हर पीने से बचने के लिये सावधानी बरतना। अन्न-दोष और संग-दोष से सदा बचना और उन पुस्तकों को न पढ़ना जो मन में वैसा ही कचड़ा भर दें जैसे कि कूड़े के डब्बे में कोई कूड़ा डाल देता है। इस प्रकार, विद्यार्थियों, अपने चरित्र के प्रहरी बन कर उसकी रक्षा स्वयं करना, तुम्हारी बाकी रक्षा तुम्हारा चरित्र स्वयं ही करेगा।

विद्यार्थियो! न बुरा सुनना, न बुरा देखना और न बुरा बोलना। इस सावधानी को अपनाने से तुम्हारे जीवन की सफलता और तुम्हारे मन में हर्षोल्लास का बना रहना निश्चित है। जिसका चारित्रिक पतन हो जाता है, उसका मन कभी भी शान्त और सन्तुष्ट नहीं होता क्योंकि उसकी अन्तरात्मा सदा ही उसे लानत देती तथा कोसती रहती है। उसके चित्त में सदा ही ग्लानि बनी रहती है और अपने साथ कभी भी सुख का अनुभव नहीं करता। बाहर वाले जब उसकी महिमा करते हैं, तब उसके भीतर उसका मन उसका कालिमापूर्ण चित्र उसके सामने लाता है और उसे अपनी बुराई आँख में गये पत्थर-कण की तरह या गुर्दे में पत्थरी की तरह सदा चुभती ही रहती है। तब ऐसे जीवन से क्या लाभ जिसमें आत्म-ग्लानि मनुष्य के साथ परछाईं की तरह उसके पीछे लगी रहे? अतः विद्यार्थियों, आज से अपने मन में यह दृढ़ संकल्प करो कि जो दिन बीत गये सो बीत गये, परन्तु आज से हम अपनी जीवन पुस्तक का नया अध्याय खोलेंगे और उदंडता को अपने जीवन में कभी पास भी नहीं फटकने देंगे। हम किसी के कहने पर लग कर, किसी के प्रभाव या दबाव में आकर अपने आत्मा को नहीं बेच डालेंगे या अपने चरित्र को नहीं लुटा देंगे क्योंकि अगर चरित्र ही चला गया तो बाकी हमारे पास क्या रह जायेगा जिस पर कि हम अपना मस्तक उठा सकें?

विद्यार्थियों! विद्या अध्ययन के दिन जीवन के प्रारम्भिक निर्माण के दिन होते हैं। इन्हीं दिनों मनुष्य के जो संस्कार बनते हैं, उन्हीं पर आगे उसके जीवन की मंज़िल खड़ी होती चली जाती है। इसी काल में ही जो आदतें पड़ती हैं, वे पक्की होती चली जाती हैं। जैसे कोमल पौधे को भी लाठी का सहारा दे कर खड़ा किया जाता है ताकि उसका तना टेढ़ा न हो और आगे बढ़ कर जब वह वृक्ष बने तो वह सीधा हो, वैसे ही विद्यार्थी जीवन भी शीघ्र प्रभावित होने वाला एवं कोमल जीवन होता है जिसमें कि ऐसी शिक्षा की ज़रूरत होती है जो उसमें ठीक आदतें डाले और उसके ठीक संस्कारों का निर्माण करे। यदि वह चारित्रिक अथवा नैतिक शिक्षा उस काल में विद्यार्थी को नहीं मिलती तो उसमें ऋणात्मक प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलता है और उसका जीवन-वृक्ष टेढ़ा-मेढ़ा सा होता है। नहीं-नहीं उसके जीवन रूपी भवन की दीवारें टेढ़ी-मेढ़ी होती है, जिनके गिरने का सदा खतरा बना ही रहता है। अतः विद्यार्थियो, आप नैतिक शिक्षा अथवा मानवी मूल्यों पर भी ध्यान दो क्योंकि उसके बिना तो मनुष्य-चोला होने पर भी जीवन पाशविक वृत्तियों वाला होता है। विद्यार्थियो, किसी भी कर्म को पुनरावृत्त करने पर आदत दृढ़ होती है। यदि मनुष्य एक बार क्रोध करता है तो उसमें दोबारा क्रोध करने की प्रवृत्ति होती है और दोबारा करने से तीसरी बार करने के लिये उसमें और भी अधिक अन्तर्वेग आता है। इस

प्रकार की आवृत्ति से उसके संस्कार पक्के होते और उसकी आदतें मज़बूत बन जाती हैं। वे जितनी दृढ़ हो जाती हैं, उतना ही उनका बदलना बाद में कठिन होता है। अतः इस आयु-भाग में ही ध्यान देना आवश्यक है। ताकि प्रारम्भ ही से अच्छी आदतों या अच्छे संस्कारों का निर्माण हो और कुप्रवृत्तियां बने ही न ताकि आगे चल कर उन से छुटकारा पाने के लिये मेहनत न करनी पड़े। भविष्य में भी उनको छुड़ाने के लिये किसी साधन को अपनाना तो पड़ेगा ही और बहुत कठिनाई का भी सामना करना पड़ेगा और कई गुणा अधिक परिश्रम करना पड़ेगा। अतः उससे अच्छा तो यही है कि पहले ही से उस आदत का धब्बा लगने ही न दिया जाय वर्ना जैसे कपड़े के अत्यन्त मैले-कुचैले हो जाने पर उसे धोना तथा उसकी मैल छुटाना अत्यन्त मुश्किल हो जाता है, वैसे ही कड़ी आदतों को मिटाना भी पहाड़ को हटाने जैसा कार्य मालूम होता है। अतः विद्यार्थियो, सद्गुणों और दुर्गुणों, मानवी और अमावनी वृत्तियों का ज्ञान प्राप्त करते हुए अपने जीवन में इसी काल से मानवी मूल्यों तथा नैतिक नियमों की स्थापना पर ध्यान दो। बुराई को प्रारम्भ में मिटाना ही बुद्धिमता है। इस नीति को अपनाओ और सदा सुख पाओ।

जीवन को सुखपूर्वक जीने की भी एक कला है। जीवन में शान्ति को बनाये रखने की भी एक विद्या है। यह जीवन क्या है, इसका अध्ययन भी एक विज्ञान है। अतः विद्यार्थियो, जहाँ अन्य कलाएं सीखते, अन्य विद्याओं का अध्ययन करते तथा विज्ञान पढ़ते हो वहाँ यदि इस कला में कुशलता प्राप्त न की, यदि मन में शान्ति बनाये रखने की विद्या न पढ़ी और यदि जीवन को सुखमय बनाने का विज्ञान न सीखा तब अन्य विद्याओं के द्वारा धन तो कमा सकोगे, पदार्थों का संग्रह तो कर सकोगे, साधन तो जुटा सकोगे परन्तु मन की शान्ति के बिना तो वे सभी फीके लगेंगे, वे सुहायेंगे ही नहीं। जैसे मन में चिन्ता होने पर डनलप के तकिये और फ़ोम के गदेले का प्रयोग करने पर भी मनुष्य सुख-चैन की नींद नहीं सो सकता, वैसे ही, जीवन को निश्चिन्त निर्भय तथा नितान्त हर्षपूर्ण बनाये रखने की कला सीखने के बिना भी मनुष्य महल-गाड़ी, नौकर-चाकर, धन-पदार्थ, और घर-परिवार होने पर भी सुख का सांस नहीं ले सकेगा। आज नहीं तो कल जब उसके जीवन में दुर्घटना, दुवृत्तान्त, हानि, शोक असफलता आदि की परिस्थिति आयेगी तो वह अशान्ति से कराह उठेगा और व्यथित या शोकाकुल हो जायगा। अतः आवश्यकता इस बात की है कि जैसे आग को बुझाने के लिये जल-भण्डार तथा अग्नि शामक यन्त्र की पहले से व्यवस्था बनी होती है, वैसे ही अशान्ति या दुखकारक परिस्थितियों के भी उपस्थित होने से पहले ही विद्यार्थी जीवन में ही व्यक्ति को इस विद्या, इस कला अथवा इस विज्ञान का भी अध्ययन कर लेना चाहिये ताकि आगे के लिये उसकी तैयारी हुई रहे। अतः विद्यार्थियो! इनका अध्ययन करो और सदा सुख पाओ!

विद्यार्थियों! जैसे रसायन विज्ञान अथवा भौतिकी में हर क्रिया के परिणाम का विज्ञान कराया जाता है, ऐसे ही मानवी कर्मों का भी तो कोई विज्ञान अथवा दर्शन होगा? जैसे अर्थ शास्त्र में या रसायन विज्ञान में हम यह अध्ययन करते हैं कि अमुक वृत्तान्त अथवा पुरुषार्थ से अमुक परिणाम (फल) हमारे सामने आते हैं, वैसे ही मनुष्य के कर्म भी तो कोई-न-कोई फल सामने लाते होंगे, चाहे वह सुख के रूप में हों चाहे दुःख के रूप में। अन्तर केवल इतना है कि भौतिक पदार्थ, रसायन अथवा तत्व चेतन न होने के कारण विचार नहीं कर सकते, निर्णय भी नहीं ले सकते और सुख-दुख की अनुभूति भी नहीं करते न ही वे किसी उद्देश्य को लेकर क्रिया-प्रतिक्रिया में भाग लेते हैं। जबकि मनुष्य चेतन है, विचारशील है, उद्देश्य या प्रयोजन को सामने रख कर कर्म करता है, किसी इच्छा या आवश्यकता से प्रेरित हो कर कर्म करता है और समाज पर पड़ने वाले उसके प्रभाव को पहले से सोच भी सकता है। अतः मनुष्य के कर्मों के साथ अच्छाई या बुराई का पहलू भी जुटा होता है जबकि तत्वों, पदार्थों या प्राकृतिक शक्तियों की क्रिया, प्रतिक्रिया में निर्णय शक्ति न होने के कारण वे नैतिक पक्ष को साथ नहीं लिये होते। अतः मनुष्य जो कि संवेदनशील और अनुभवशील है, कर्ता के अतिरिक्त भोक्ता भी है, अर्थात् वह अपने कर्मों के नैतिक या अनैतिक होने का परिणाम स्वयं भोगता भी है और उसके कर्मों का परिणाम समाज, जिसका वह एक अंग अथवा इकाई है, पर भी पड़ता है। उसी नैतिकता पक्ष को, जो कि शीघ्र या बाद में सुख या दुःख की स्थिति पैदा करते हैं, 'अच्छाई' या 'बुराई' 'पुण्य' या 'पाप', 'सत्कर्म' या 'विकर्म', की संज्ञा दी जाती है। अतः विज्ञान में जैसे रासायनिक अथवा भौतिक क्रियाओं की प्रतिक्रिया से सम्बन्धित नियमों का बोध होता है और उन नियमों को जानकर मनुष्य उन्हें जीवन में प्रयोग करता है, वैसे ही कर्मों के सिद्धान्त, अथवा अच्छाई और बुराई के नियमों को जान कर भी हम जीवन में उन्हें अपनी तथा समाज की सुख-सुविधा के लिये प्रयोग कर सकते हैं। अतः विद्यार्थियो, जैसे आप प्राकृतिक नियमों का अध्ययन करते हो, वैसे ही नैतिक नियमों का भी ज्ञान प्राप्त करो और उनका जीवन में प्रयोग करके, अच्छे अधिक अच्छे या पूर्णतः अच्छे बनने का यत्न करो। आप अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाओ और सदा सुख पाओ!

विद्यार्थियो, जिस चेतन और जड़ की हम पहले बात कर आये हैं, उन दो प्रकार के व्यवहारों को देखते हुए क्या आपके मन में यह प्रश्न नहीं उठता कि शरीर तो

प्रकृतिकृत है और रासायनिक तथा भौतिक विज्ञान के नियमों के अनुसार ही कार्य करता है, तब भला इस में चेतनता का स्रोत कौन-सा है? जब आप यह जानते हैं कि संकल्प अथवा विचार का न कोई वज़न है न वह जगह घेरता है, न उसकी गति ही मापी जा सकती है और न उसका कोई माप है, तब क्या आपके मन में यह विचार नहीं आता कि **विचार अभौतिक है और वह कोई** रासायनिक तत्व भी नहीं है क्योंकि वह तो देश और काल अथवा स्पेस और टाइम से अतीत है, वह गुरुत्वाकर्षण और प्रकाशादि प्राकृतिक ऊर्जा या शक्तियों से भी भिन्न है और अभौतिक है। वह भौतिक मस्तिष्क की उपज भी नहीं है क्योंकि विचार तो अपने बारे में भी निर्णय करता, अपनी आलोचना करता, अपना मूल्यांकन करता, स्वयं से स्वयं प्रभावित होता और उसके फलस्वरूप स्वयं ही खुश होता हुआ या पश्चात्ताप करता हुआ सुख या दुःख का अनुभव भी करता है।

पुनश्च, आज तो मस्तिष्क-विज्ञान तथा स्नायुमण्डल विज्ञान के वेत्ता भी इस बात को मानने लगे हैं कि मस्तिष्क के विभिन्न भाग तो विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा विभिन्न सन्देश प्राप्त करते हैं और उन सभी में सामंजस बिठाने वाला, उनको समझने वाला, उन को जानकर निर्णय करने वाला और, पश्चात, शरीर के विभिन्न भागों से कार्य करने या रोकने वाला तो इससे भिन्न ही कोई है। उन्हों ने यह भी महसूस किया है कि मस्तिष्क के दायें गोलार्द्ध तथा बायें गोलार्द्ध में तालमेल पैदा करते हुए उनसे कार्य लेने वाला चेतन एवं विचारवान कोई अन्य अभौतिक सत्ता ही है जो संवेगवान भी है क्योंकि उन्होंने शोधकार्य से यह भी मालूम किया है कि यद्यपि मस्तिष्क में संवेगों की अभिव्यक्ति का स्थान है तो भी आवेगों-संवेगों का अनुभव किसी अन्य सत्ता ही को होता है जो अपने लिये "मैं" शब्द का प्रयोग करती है। अतः विद्यार्थियो, आप भी "मैं" शब्द का प्रयोग तो करते ही हो परन्तु "मैं-मैं" कहने वाली उस सत्ता को जानो, उसी अनुसार व्यवहार करो और सदा सुख पाओ!

विद्यार्थियो, आप सोचते होंगे कि बहुत-से वैज्ञानिक तथा दार्शनिक तो यह भी कहते हैं कि "मैं" कहने वाली सत्ता अभौतिक नहीं है अर्थात् वे शरीर एवं मस्तिष्क से अलग किसी चेतन या शाश्वत सत्ता को नहीं मानते।हाँ, आप ठीक कहते हैं कि ऐसे लोग भी है परन्तु संसार में करोड़ों लोग ऐसे भी हैं जो अभौतिक एवं चेतन सत्ता का शरीर से अलग शाश्वत अस्तित्व मानते हैं। आज बहुत-से ऐसे वैज्ञानिक भी हैं, जिन्होंने विज्ञान के किसी-न-किसी क्षेत्र में नोबल पुरस्कार भी प्राप्त किया है और जो यह मानते हैं कि शरीर से भिन्न एक चेतन सत्ता है। आज ऐसे आध्यात्मवादी भी हैं जो कि शरीर विज्ञान के आधार पर यह भी स्पष्ट करते हैं कि उस अभौतिक चेतन सत्ता, जिसे "आत्मा" कहते हैं, का मस्तिष्क में कहाँ निवास है और वह शरीर से कैसे कार्य लेती है तथा सारे शरीर से उसका सम्बन्ध किस तरह है। ऐसी आध्यात्मवादी शिक्षा-संस्था भी है जिसमें शरीर विज्ञान तथा अन्य विज्ञानों को जानने वाले लोग विज्ञान-सम्मत रीति से यह स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं कि मस्तिष्क में एक चेतन अविनाशी सत्ता है जिसे 'आत्मा', 'रूह', 'सोल' या अन्य नामों से भी हिन्दु, मुसलमान, सिक्ख तथा ईसाई मानते हैं।

विद्यार्थियो, इसके अतिरिक्त, अन्य भी ऐसे बहुत से वैज्ञानिक, विशेष तौर पर शरीर विज्ञान के ज्ञाता हैं जिन्होंने पुनर्जन्म के वृतान्तों की जाँच करके उनका संग्रह किया है, हिप्नोटिक रिग्रेशन अर्थात् सम्मोहन द्वारा किसी व्यक्ति की चेतना अपने पूर्व जन्म की अवस्था में ले जा कर उन व्यक्तियों के पूर्वजन्मों के उल्लेखों के संग्रह भी प्रकाशित किये हैं तथा शरीर से कुछ काल तक अलग होने की दास्तानों को जिन्हों ने बताया है, उनकी जांच कर के उनके संग्रह भी प्रकाशित किये हैं। इसके अलावा युक्ति के आधार पर भी यह स्पष्ट किया जा सकता है कि शरीर से भिन्न 'आत्मा' नाम की चेतना सत्ता है।

अतः विद्यार्थियो, अब आप इस तथ्य पर स्वतन्त्र रूप से विचार करो और इसका अनुभव करने के लिये जो सहज विधि है, उसका प्रयोग करके देखो और तब निर्णय करो कि आप वास्तव में कौन हो? विद्यार्थियो, अपने स्वरूप के विषय में इस सत्य को अपनाओ और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियो, जब आप संसार में अनेकानेक पदार्थों का ज्ञान या विज्ञान प्राप्त करने के लिये समय, धन और शक्ति खर्च करते हो तो क्या स्वयं अपने आपको जानना आवश्यक नहीं? स्वयं को जाने बिना ही दूसरी बातों को जानने में लगे रहना तो गोया "चिराग तले अन्धेरा" वाली उक्ति का चरितार्थ होना है। यह तो बाह्यमुखता है। यदि किसी को इसे जानने के लिये जिज्ञासा ही नहीं होती तो मानो कि उसकी आध्यात्मिक जिज्ञासा वैसे ही मन्द पड़ गयी है जैसे किसी की पाचनाग्नि मन्द पड़ जाती या भूख मर जाती है। अतः वह तो आध्यात्मिक रोग का चिन्ह है जिसका निवारण करने की आवश्यकता है। अतः विद्यार्थियो, यह भी जानो कि "मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, कहाँ मुझे जाना है, मेरे जीवन का क्या लक्ष्य है, अच्छाई और बुराई में क्या अन्तर है और मुझे अपने कर्मों को अच्छा अथवा श्रेष्ठ बनाना है।"इस प्रकार के आत्म-ज्ञान को अपनाओ और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियो, आज सभी ओर यह नारा लगाया जाता है कि यह वसुधा एक कुटुम्ब है अर्थात् हम एक वृहद परिवार के सदस्य हैं। सभी यह कहते हैं कि "हिन्दु

मुस्लिम, सिक्ख और ईसाई,आपस में सभी भाई-भाई" हैं। इन दोनों मान्यताओं से ही स्पष्ट है कि हरेक मनुष्य के मन में यह सत्यता छिपे रूप में है ही कि हम में से हर कोई "आत्मा" है और हम सभी परमात्मा की सन्तान हैं। यदि हम सभी स्वयं को "आत्मा" न मानें और एक परमपिता परमात्मा की सन्तान न मानें तो हम "भाई-भाई" कैसे हैं? शारीरिक रूप से तो हम सभी के अपने-अपने अलग ही माता-पिता हैं और इसलिये दैहिक दृष्टि से तो हम भाई-२ नहीं है। अवश्य ही आत्मिक नाते ही से हम सभी भाई-भाई हैं और एक परमपिता की सन्तान हैं। इस प्रकार, विश्व-भ्रातृत्व का सिद्धान्त अथवा इसकी मान्यता इसी सत्यता पर टिकी है कि हम में से हर कोई एक आत्मा ही है और इसलिये भाई-भाई हैं। यदि हम में से हरेक स्वयंको आत्मा न मानें तो भाई चारे का आधार ही मिट जायेगा। अतः संसार में परस्पर स्नेह, सहानुभूति, सहयोग, सह-अस्तित्व एवं सहनशीलता के लिये "विश्व भ्रातृत्व" अथवा "वसुधैव कुटुम्बकं" के वाक्यों या वाक्यांशों द्वारा प्रतिपादित सत्य को स्वीकार करना जरूरी है। अतः विद्यार्थियो इस सत्य को अपनाओ और सदा सुख पाओ क्योंकि इससे ही सद्गुणों का विकास होता है और मनुष्य के कर्म श्रेष्ठ बनते हैं, अर्थात् इस से बुराई मिटती है और अच्छाई जीवन में आती है।

विद्यार्थियो, आज कई लोग अच्छाई और बुराई के भेद को ही स्वीकार नहीं करते अथवा नहीं जानते अथवा जानते हुए भी उस ज्ञान के अनुसार आचरण नहीं करते। परन्तु अब तो शरीर-विज्ञान तथा चिकित्सा-विज्ञान के द्वारा हुए परीक्षणों से भी स्पष्ट है कि अच्छे और बुरे कर्मों, गुणात्मक और ऋणात्मक कर्मों में अन्तर है। उन्होंने एलैक्ट्रो एनसिफिलोग्राम द्वारा मस्तिष्क से निकलने वाली विद्युत-तरंगों की तथा एलैक्ट्रो कार्डियोग्राम द्वारा हृदय की गति की जांच की है और यन्त्रों द्वारा व्यक्ति के पुट्ठों के भी तनाव का निरीक्षण किया है और देखा है कि जब किसी व्यक्ति में क्रोध का संवेग होता है तो उसके मस्तिष्क से जो विद्युत-तरंगें विकीर्ण होती हैं वे शान्त व्यक्ति की तरंगों से भिन्न होती हैं। उन्होंने यह भी पाया है कि उस समय हृदय की गति भी अधिक तेज होती है और पुट्ठे भी तन जाते हैं। इन परीक्षणों के परिणामों को जांचने से वे इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि क्रोध के प्रभाव से मनुष्य के शरीर की कई ग्रंथियों से ऐसे रस निकलते हैं जिस से उसकी स्वचालित स्नायु-तन्तु-तंत्रिका (Autonomous nervous system) पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है और उसके मस्तिष्क, हृदय, फेफड़ों, पुट्ठों-सभी पर ऐसा बुरा प्रभाव पड़ता है कि जिस से उसका स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है, उसकी रोग-नाशक शारीरिक क्षमता कम होती जाती है और हृदय-रोग, श्वास रोग आदि-आदि अनेकानेक भयानक रोग आ घेरते हैं, उसका रक्तचाप बढ़ जाता है और उस मानसिक तनाव के कारण उसे कैन्सर तक के भयानक अथवा प्रायः असाध्य रोग भी हो जाते हैं। घृणा, द्वेष आदि के भी बुरे ही प्रभाव शरीर तथा मस्तिष्क पर पड़ते हैं। शरीर को हानि पहुँचाने के अतिरिक्त, समाज के लिये भी तो ऐसे कर्म दुःखोत्पादक होते हैं। क्रोधी व्यक्ति दूसरों के मन को भी अशान्त करता है, तोड़फोड़ करता है, अपराध में प्रवृत्त होता है और न जाने कितनी प्रकार के कुकृत्य करता है। आज संसार में हिंसा, लड़ाई-झगड़े, मार-काट सब इसी के कारण ही तो हैं जिससे कि समाज को आर्थिक हानि भी होती है और अनेकानेक समस्याओं का समना करना पड़ता है। इस प्रकार, मनुष्य के जिन कर्मों से चिन्ता, शोक, भय, क्रोध, घृणा, द्वेष, तनाव, उत्तेजना, उक्साहट, फुसलाव, आदि होता है और संसार में नैतिक नियम तथा मर्यादा भंग होते हैं तथा अशान्ति, रोग और आर्थिक एवं शारीरिक दुःख पैदा होते हैं, वे बुरे कर्म ही तो होते हैं। इसके विपरीत, जिन कर्मों से स्वास्थ्य, सुख, शान्ति, आर्थिक प्रगति आदि होते हैं तथा सभी हर्षोल्लास और प्रेम एकता तथा सहयोग से रहते हैं, वे अच्छे कर्म होते हैं।

अतः विद्यार्थियो, यह कहना ठीक नहीं है कि अच्छाई और बुराई में कोई अन्तर नहीं है और कि ये दोनों मनुष्य के अपने मन-माने विचारों पर आधारित हैं बल्कि सत्यता तो यह है कि अच्छाई अथवा पवित्रता ही सुख-शान्ति की जननी है और बुराई या अपवित्रता ही सभी दुःखों का मूल है। काम वासना, क्रोध का संवेग, लोभ की वृत्ति, मोह की उत्पत्ति और अहंकार का आक्रमण ये ही संसार में सभी प्रकार की अशान्ति के जन्म-दाता हैं। आप इन पर विजयी बनो और ब्रह्मचर्य, धैर्य, सहनशीलता, सन्तोष अनासक्ति और नम्रता को अपनाओ, दिव्यता को जीवन में लाओ और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियो, संसार में मनुष्य की इच्छाओं का कभी अन्त नहीं होता। इच्छाओं को भोगते-भोगते व्यक्ति बूढ़ा हो जाता है तो भी उसकी इच्छाएं जवान बनी रहती हैं। इच्छाओं में से भी कई इच्छाएं तो जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने से सम्बन्धित, कई किसी उच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के निमित्त और कई दूसरों की भलाई करने के लिये होती हैं, परन्तु मनुष्य की बहुत-सी इच्छाएं विषय भोगों की भावना से उत्पन्न होती हैं। वे वासनायें नशीले पदार्थों के सेवन, इन्द्रिय-वेग और मन की तृष्णा को तृप्त करने के भाव से उठती हैं। ये उत्तरोक्त इच्छाएं मनुष्य के विवेक पर पर्दा डाल देती हैं और बहुत-से बुरे कर्मों को करने पर मजबूर करती तथा उसे अपना अधिकाधिक गुलाम बनाती चली जाती हैं। जो व्यक्ति सादगी, सन्तोष, संयम, नियम, मर्यादा और

आत्म-नियन्त्रण से युक्त रहता है और आन्तरिक सुख तथा शान्ति का अनुभव करता है। अतः विद्यार्थियो, आप अपने जीवन में सादगी और संयम-नियम को अपनाओ, मर्यादा का पालन करो, तथा सन्तोष को धारण करो और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियो, संसार में हरेक व्यक्ति का अपना-अपना व्यक्तित्व होता है। कई लोगों का व्यक्तित्व प्रभावशाली और प्रशंसनीय होता है और अन्य लोगों का मध्यम या अधम अर्थात् सामान्य या अपराधिक एवं क्लेषकारी! कई व्यक्तियों के व्यक्तित्व में समाकलन, सामंजस, समायोजन, संतुलन और पूर्णता होती है और अन्य कई लोगों का मन विभाजित असन्तुलित, अव्यवस्थित और अयुक्त होता है। जो मनुष्य सदाचार-युक्त, सबसे मित्रतापूर्ण एवं प्रेम से व्यवहार करने वाला गुण-ग्राहक, विनोदप्रिय, हर्षित-चित्त, सेवा-प्रिय, शालीन, स्वमान में स्थित और दूसरों को सम्मान देने वाला, नम्रचित्त, धैर्यवान तथा सन्तोषी होता है, वही महान व्यक्तित्व का स्वामी माना जाता है। अतः विद्यार्थियो, आप भी अपने व्यक्तित्व का इस प्रकार विकास करो। इन सद्गुणों, सद्वृत्तियों तथा सद्व्यवहारों को जीवन में अपनाओ और सदा सुख पाओ तथा संसार में सुख बढ़ाओ।

विद्यार्थियो, जिसके व्यक्तित्व का ठीक विकास हुआ होता है, वह उदारचित्त होता है। वह संकीर्ण विचारों वाला, ईर्ष्यालु या घृणा एवं द्वेष करने वाला नहीं होता। वह निर्धनों को तथा दलित जातियों में उत्पन्न लोगों को घटिया नहीं मानता, न उनसे दुर्व्यवहार करता है। वह हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई इत्यादि धर्म-भेद के आधार पर या रंग-भेद, भाषा-भेद, राष्ट्र-भेद आदि के आधार पर दूसरों से अनादरपूर्वक, घृणा-युक्त और अनुचित बर्ताव नहीं करता, बल्कि सभी के आत्मा को देखते हुए, सभी को एक परमपिता परमात्मा की सन्तान निश्चय करते हुए उनसे भ्रातृत्व की भावना से सद्व्यवहार करता है। वह सभी जातियों, वंशों, धर्मों आदि के संसार रूप एक ही बगीचे के रंग-बिरंगे फूल या एक ही वृक्ष की विभिन्न शाखाएं मानकर उन्हें एक ही मानव-कुटुम्ब के सदस्य अथवा एक ही समाज रूपी शरीर के विभिन्न अंग मानकर चलता है। सभी के प्रति उनके मन में सदा शुभ भावना और शुभ कामना बनी ही रहती है और वह सभी से स्नेह करता तथा सभी को सहयोग देता है। अतः विद्यार्थियो, इन्हीं भावों को अपनाओ और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियो, किसी को भी दुःख देना पाप है। मन की चंचलता मनुष्य को तोड़फोड़ करने, दूसरों का अपमान करने, हुड़दंग मचाने आदि के लिये उकसाती है। आप उस चंचलता को वशीभूत कभी भी न होना। विद्यार्थी होते हुए अपने स्कूल-कालेज की चीजों को तोड़ना, अपने आचार्यों का अपमान करना, निर्धन अथवा पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों से घटिया व्यवहार करना, होली पर हुड़दंग मचाना और राह जाते हुओं को सताना, स्कूल और कालेज में प्रवेश प्राप्त करने वाले नये छात्रों तथा नई छात्राओं की रैगिंग करना, उनसें दुर्व्यवहार करना गोया स्वयं को मानवता के स्तर से नीचे उतारना, अपने मन में आसुरियता या असभ्यता को पालना तथा स्वयं को दूसरों के अभिशाप का भागी बनाना है। विद्यार्थियों, जिस स्कूल और कालेज की वस्तुएं हमारे ही प्रयोग और प्रगति के लिये हैं, उन्हें तोड़ना तो गोया स्वयं को तथा अपने सहपाठियों को या बाद में आने वाले विद्यार्थियों को हानि पहुँचाना है। क्या यह उन्माद है या बुद्धिमता है? अपने ही देश की सम्पत्ति को नष्ट करना, क्या यह देश-भक्ति है या देश-द्रोह?

विद्यार्थियों, अन्य व्यक्तियों को असमर्थ या किसी कारण से कम सुविधाओं से युक्त देखकर उनसे घटिया व्यवहार करना क्या यह सभ्यता अथवा मानवता है या इसके विपरीत भाव?

विद्यार्थियों, यदि आप में शक्ति है तो उस द्वारा दूसरों की सेवा करो, उन्हें सताओ नहीं। यदि किसी को सुख नहीं दे सकते तो उन्हें दुख मत दो। विद्यार्थियो, दूसरों को सदा सुख दो और सदा सुख पाओ।

विद्यार्थियो, अब आप स्वतन्त्र रूप से स्वयं ही सोचो और निर्णय करो कि पूर्वोक्त तथ्य जीवन के लिये लाभदायक हैं या नहीं। इसके साथ-साथ उन्हें जीवन में अपनाओ और सहज ज्ञान तथा सहज राजयोग, जिससे कि व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास होता है, आदतें सुधरती हैं, अच्छे संस्कार बनते हैं, विवेक विकसित होता है, मन की एकाग्रता बढ़ती है, सदाचार और सद्व्यवहार स्वभाव ही बन जाते हैं और मनुष्य हर कार्य में सद्गुणों से सफलता को प्राप्त करता है तथा उसकी कार्यक्षमता और विचार शक्ति भी उन्नति को प्राप्त होते हैं, की शिक्षा प्राप्त करो। यदि आपके मन में स्वयं आत्मा और परमपिता परमात्मा को जानने तथा अनुभव करने की जिज्ञासा हो, यदि आप मन में शान्ति और आनन्द को बनाये रखना चाहते हों तो प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय भी निःशुल्क आपकी यह सेवा कर सकता है। अब आप समय निकाल कर जीवन को महान् बनाओ और सदा सुख पाओ।

अहं-भाव का त्याग

ब्र० कु० प्रोफेसर कालिदास, अहमदाबाद

रूप, यौवन, सत्ता, संपत्ति, कला, विद्या और विशेषताओं को यदि हज़म नहीं कर सकते, तो वह अहंभाव का कारण बन जाता है। अध्यात्म की परिभाषा में कहा जाय तो देह-अभिमान ही अहंभाव का कारण है। इंगलिश में केपिटल आई (I) है। आई (I) अर्थात् मैं। लेकिन मैं माना कौन? मैं आत्मा या शरीर? इस रहस्य को समझकर दैनिक जीवन में आत्मिक स्वरूप की अनुभूति करते-करते अहंभाव से मुक्त रह सकते हैं।

सत्ता का अरुणोदय होने से उसके प्रशंसक वर्ग का विस्तार मानव के चारों ओर वृद्धि पाता है। जब यह प्रशंसक वर्ग नीर क्षीर का विवेक भूलकर खुशामद की हद तक पहुँचता है तब इन्सान को उसका नशा चढ़ता है। अहंभाव के नशे में आकर वह अनर्थ आचरण के द्वारा अपने पतन के बीज बोता है।

मनुष्य के पास जो कुछ स्थूल में मौजूद है उसका वह अभिमान करता है, यह तो समझ में आता है लेकिन जब वह व्यर्थ, आसुरी शक्तियों का भी अभिमान रखता है तब तो हद हो जाती है। मेरे हाथ लम्बे हैं, मैं जो कहता हूँ वह कर सकता हूँ, चाहे किसी को भी परेशान कर सकता हूँ—ऐसे उद्‌गार अहंभाव का अति विकृत स्वरूप है। किसी को धोखा देने की कला का, किसी को मूर्ख बनाने का, खुद जैसा है उससे दंभ दिखाने का, युक्ति युक्त रिश्वत लेने का, किसी भी व्यक्ति के द्वारा गलत काम कराने की कला का जब इन्सान अभिमान रखता है, उसे लोगों के सम्मुख रखता है तब अहंभाव का विचित्र स्वरूप खड़ा हो जाता है।

अहंभाव आत्मानुभूति और परमात्मानुभूति के बीच बाधा-रूप है। उसके त्याग के बिना दिव्यता संपन्न, कल्याणकारी विचार मस्तिष्क में उठते नहीं हैं। विश्व एक परिवार है—ऐसी भावना पैदा नहीं होती। मानव—मानव के बीच अहंभाव की दीवार भेद खड़ा कर देती है। जब उसके स्वमान को चोट पहुँचती है, उसे सम्मान नहीं मिलता, उसकी कद्र नहीं होती या उसके ऊपर उसके योग्य ध्यान नहीं दिया जाता तो अहंभावी व्यक्ति गुस्से में आ जाता है। उसका क्रोध सभी को दुःखी व अशांत बना देता है। इसके परिणाम-स्वरूप लोग उससे दूर भागते रहते हैं। जो लोग उसे साथ देते हैं वह केवल स्थूल रूप में होता है। दिल से, आत्मा की प्रसन्नता के साथ नहीं देते । ऐसा व्यक्ति सर्व का आदर और विश्वास गँवा देता है। उसके शब्दों में, उसके व्यवहार में विश्वास रखने का कोई साहस नहीं करता ।

अहंभाव के विकृत स्वरूपों को तो हम जानते हैं। दैनिक जीवन में अखबारों के माध्यम से, संबंध, संपर्क के व्यक्तियों द्वारा उसकी अनुभूति होती है। लेकिन प्रश्न यह है कि अहंभाव का त्याग कैसे करे? क्योंकि अहंभाव वाला व्यक्ति मान, शान, पद, प्रतिष्ठा का लालची होता है। अपनी इस वृत्ति के कारण उसे प्रगति के पथ पर ले जाने वाले मानव का भी विश्वासघात कर सकता है। अहंभाव इन्सान को शांति से जीने नहीं देता। कब-कब ऐसा व्यक्ति परपीड़न के स्वभाव वाला होता है।

अहंभाव के त्याग के लिए हमें सोचना चाहिए कि इस दुनिया में कुछ भी शाश्वत नहीं है। विश्व परिवर्तनशील है। अपने पास रूप, यौवन, सत्ता या संपत्ति है पर समय के परिवर्तन के साथ उसमें भी घाटा आता है। उम्र के कारण शरीर निर्बल बनता है। परिस्थिति बदलनी है और सत्ता परिवर्तन होने से सत्ता में कटौती आती है। आर्थिक उथलपुथल में, प्राकृतिक आपदाओं में, अनिवार्य घटनाओं में, बीमारी, कोर्ट, कलह में धन चला जाता है। इससे विनाशी वस्तुओं के अहं में आकर शाश्वत सुखों को ठोकर मारने की मूर्खता इन्सान को नहीं करनी चाहिए।

अहंभाव का कारण अज्ञान है। इसी विषय में कवि नरसिंह मेहता की पंक्तियाँ प्रसिद्ध हैं।

'हूँ करुं, हूँ करुं एण अज्ञानता,
शाकटनो भार जेम श्वान ताजे''

इसका अर्थ है। ''मैं करता हूँ, मैं करता हूँ ऐसा कहना अज्ञान है। जैसे बैलगाड़ी के नीचे कुत्ता चलता हो और वह समझे कि मैं ही सारी बैलगाड़ी का बोझ ढोता हूँ।''

मानव को सोचना चाहिए कि इस विशाल विश्व का कारोबार कितना स्वाभाविक रूप से चलता है। वायु, पानी , अग्नि, धरती, आकाश, सूरज, चाँद, सितारे अपना कार्य करते रहते हैं। फूल चारों ओर खुशबू फैला देते हैं। फलों से आच्छादित्त पेड़ नम्रता का पाठ सिखाते

हैं। वैसे ही हम भी निमित्त भाव रखकर, साक्षी भाव रखकर कार्य करें, तो अहंभाव से मुक्त रह सकते हैं। इसके बारे में सुप्रसिद्ध चिंतक श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार ने कहा है ' यदि आपके द्वारा कभी किसी प्राणी की सेवा होती है तो ऐसा गर्व न करो कि मैंने उस पर उपकार किया है। यह निश्चित समझो कि उसे जो सुख मिला है वह अवश्य उसके शुभ कर्म का फल है। आप तो केवल निमित्त बने हो । उस प्राणी का उपकार समझो कि जिसने तुम्हारी सेवा को स्वीकार किया है। ईश्वर का आभार कहो कि उसने आपको निमित्त बनाया।'

कूपमंडूकता से अहंभाव पैदा होता है । विश्व में कैसी-कैसी प्रतिभाएँ हैं। उसका जब उसे ज्ञान होता है तब मानव को यथार्थ अनुभूति होती है कि उसका अहंभाव निरर्थक था। सारी जिन्दगी युद्ध करके सत्ता, कीर्ति और संपत्ति प्राप्त करनेवाले सम्राट सिकंदर को अंतकाल में ज्ञान मिला। इससे जीवन की अंतिम घड़ियों में उसने अपने अधिकारियों को सूचना दी कि मृत्यु पश्चात् उसके दोनों हाथ शव से बाहर रखे जायें, जिससे दुनिया समझे कि सम्राट सिकंदर अपने साथ कुछ भी नहीं ले गया है। अहंभाव को मिटाने का यह कितना स्पष्ट उदाहरण है।

जब मनुष्य को अपनी संपत्ति का गर्व होता है तब सोचना चाहिए कि इस विशाल विश्व के नक्शे में कहीं भी उसका घर दिखाई देता है? विशाल विश्व को सिंधु-सागर समझकर स्वयं को बिन्दु रूप आत्मा समझकर नम्रता का पाठ धारण करके अहंभाव को छोड़ना चाहिए।

कर्म, अकर्म और विकर्म का ज्ञान होता है तो मानव अहंभाव के अनिष्ट को छोड़ सकता है। मेरे नवयुवक अध्यापक मित्र ने कहा कि मुझे आशीर्वाद दो कि मेरे जीवन में कभी अहंकार का प्रवेश न हो। मुझमें आशीर्वाद देने की योग्यता नहीं है लेकिन मुझे उस भाई की नम्रता पंसद आ गई । जो मानव अपनी जीवन यात्रा के बारे में जाग्रत है वह अहंभाव से मुक्त रह सकता है। इससे कर्मों की गहन गति का ज्ञान अहंभाव को रोकने के लिये ब्रेक है। कबीर ने ठीक ही तो कहा

'गर्व कियो सोई नर हरयो'।

दुर्योधन और रावण का अहंभाव के कारण पतन हुआ। विभिन्न क्षेत्र के महत्त्वपूर्ण व्यक्ति अहंकार के पंजे में आकर अपनी प्रगति रोक लेते हैं। ऐसी कितनी ही घटनाओं के, कहानियों के हम साक्षी हैं। इससे जिसे लगातार उन्नति करनी है उसे कभी भी गर्व नहीं करना चाहिए। मानव जैसा कर्म करता है वैसी छाप उसकी आत्मा पर लग जाती है। मानव अपने कर्मों के अनुसार जन्म लेता है। श्रेष्ठ जन्म, भाग्य के लिए किसी भी विकार का अंश बाधा-रूप है। प्रसिद्ध विकारों में अहं का स्थान पाँचवा है लेकिन उसका प्रभाव काफी गहरा है। मानव की सर्व शक्तियों, विशेषताओं को वह समाप्त कर सकता है। मानव को यदि अच्छा संग, संबंध, संपर्क मिलता है तो उसके जीवन में नम्रता आती है और अहंभाव मिट जाता है। योगाभ्यास, प्रार्थना, ध्यान भी दैनिक आहार जैसे ही महत्त्वपूर्ण हैं। दैनिक जीवन में योगाभ्यास (राजयोग आदि) का निश्चित स्थान होने से अहंभाव को छोड़ सकते हैं। तटस्थ भाव से परीक्षण करके खुद की विशेषताएँ और कमजोरियों को अलग रखें। अंतर रूपी आईने में अपनी सच्ची तस्वीर देखें। पिताश्री प्रजापिता ब्रह्मा का जीवन नम्रता का पाठ सीखने के लिए और अहंभाव का त्याग करने के लिए उत्तम उदाहरण है।

कटक – सम्पादक एवं सुप्रसिद्ध ज्योतिषी भ्राता डा० एन० बेनर्जी, भ्राता सी० वी० मूर्त्ति, बरिष्ठ वकील, उच्चतम न्यायालय तथा अन्य को आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन कराती हुई ब्र० कु० कुलदीप बहन।

भीलवाड़ा – ग्राम नन्दराम में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' में भ्राता डा० रमेश पाटिल तथा अन्य को चित्रों पर व्याख्या देती हुई ब्र० कु० मंगल बहन।

निमित्त-भाव

ले०—ब्रह्माकुमारी सुधा, शक्तिनगर, दिल्ली

कुछेक शब्द तो साधारण होते हैं परन्तु उनका अर्थ बड़ा गम्भीर होता है उनके परिणाम बहुत ही महत्त्वपूर्ण होते हैं। ऐसा ही एक शब्द है—'निमित्त'।

सभी धार्मिक ग्रन्थों में परमात्मा के प्रति समर्पण होने की बात बार-बार कही गई है। भक्त लोग अपनी पूजा, भक्ति में भी प्रतिदिन ये कहा करते हैं कि हे प्रभू, मैं आपके अर्पण हूँ, मेरा सब-कुछ आपका ही है। और जो आपका है, उसे आपका ही समझने में मेरा कुछ खर्च नहीं होता, न ही उसके लिए मेरे मन में कोई आपत्ति ही होती है। परन्तु आध्यात्मिक प्रगति के लिए समर्पण के भाव को समझते हुए भी अर्थात् उसके अर्थ को जानते हुए भी उन्हें यह मालूम नहीं होता कि परमात्मा के प्रति समर्पण कैसे किया जाए अथवा कि समर्पण की विधि क्या है? परन्तु गम्भीरता से सोचा जाए तो समर्पणमयता की विधि है—निमित्त भाव।

निमित्त भाव एक धारणा भी है और दृष्टिकोण भी जिस पर एक आध्यात्मिक व्यक्ति का सारा जीवन व सारा व्यवहार टिका होता है। "हे पभु, मैंने अपने आप को अब आपके हवाले कर दिया है और अब मेरा सारा कार्य-कलाप आपके ही आदेश, निर्देश और संदेश के द्वारा चलेगा अथवा आपके द्वारा ही चलाया जाएगा जैसे कि विद्युत शक्ति किसी यन्त्र को चलाती है"—यही निमित्त भाव है जो इस विश्वास पर आधारित है कि परमात्मा ही मेरा करनकरावनहार है और मैं उसके हाथ में एक यन्त्र-मात्र हूँ।

इस छोटे-से भाव परिवर्तन अथवा मनोपरिवर्तन से स्वपरिवर्तन की सारी प्रक्रिया प्रारम्भ होकर अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचती है। क्योंकि स्वयं को निमित्त मानने वाले व्यक्ति का सबसे पहले भला यह होता है कि उसका अभिमान मिट जाता है और वह परमपिता परमात्मा की छत्रछाया के अन्तर्गत आ जाता है। अभिमान ही तो मनुष्य को गिराने वाला है और पापों का मूल है : अभिमान ही मिट गया तो मानों एक बड़ा शत्रु हमारे बिना गोली चलाए मारा गया। अभिमान केवल शत्रु ही नहीं बल्कि शत्रुओं का सरदार है। यह तो ए-क्लास उग्रवादी (Extremist) है जिसके ज़िन्दा या मरे पकड़े जाने पर २१ जन्म का इनाम है। अभिमान के मारे जाने से दूसरे उपद्रवी—काम, क्रोध, लोभ, मोह भी बेचारे पकड़े जाते हैं। आप सोचते होंगे कि ऐसे उपद्रवी भला इतना सहज कैसे पकड़े जाते हैं?

जब हम स्वयं को परमात्मा के अर्पण करके निमित्त मानते हैं तो गोया हम परमात्मा को याद करते हुए स्वयं को भी आत्मा तो समझते ही हैं और इस विधि देहाभिमान पर तो धावा हो ही जाता है और वह ध्वस्त हो जाता है। उस देहाभिमान रूपी अंग रक्षक (Body Guard) के मारे जाने ही से तो अभिमान अथवा अहंकार मारा जाता है। फिर जब देहाभिमान ही नहीं रहा तो काम विकार कहाँ से प्रगट होगा? 'काम' का भी काम तमाम हो जाता है। काम और अभिमान ही तो क्रोध पैदा करते हैं। क्रोध तो सिपाही है और इस आसुरी सेना के मेजर जनरल एवं कर्नल (Colonel) तो अभिमान और काम ही हैं। जब अभिमान और काम का ही नाम-निशान नहीं रहता तो क्रोध व लोभ भी हथियार डाल देते हैं। जब हमारा सब-कुछ शिवबाबा का हो गया, फिर हम लोभ किस के लिए करेंगे? जब हम शिव बाबा के हो गये, तब हमारा मोह किसके साथ होगा? इस प्रकार यह निमित्त भाव एक ऐसी स्टेनगन है कि जिसके एक ही फायरिंग से इतनी गोलियाँ निकलती हैं कि पाँचों शत्रु एक-साथ मारे जाते हैं और विजय हमारे जन्म-सिद्ध अधिकार की रीति से आकर सलाम करती है। इसलिए गीत तो यह है—'पवित्र बन, माँ भारती पुकारती'—अथवा पवित्र मन रखो, पवित्र तन रखो, पवित्रता मनुष्यता की शान है....." परन्तु मैं कहती हूँ कि "निमित्त बन निमित्त बन माँ भारती पुकारती" अथवा "निमित्त तन करो, निमित्त मन करो, निमित्त भाव ही महान है....." क्योंकि पवित्र भी वह बनता है जो निमित्त बनता है।

'सत्य की खोज'

बी० के० महेश मयंक, भरतपुर

मुझे प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के भरतपुर आश्रम में आते हुए मात्र ४५ दिन हुए हैं। मैं कई वर्ष से कम्युनिस्ट पार्टी में हूँ। कम्युनिस्ट यह मानते हैं कि ईश्वर नाम की कोई सत्ता नहीं है तथा धर्म अफीम के समान है और विकास में अवरोधक है। मेरे अन्दर भी यह अंतर्द्वन्द्व था कि ईश्वर है या नहीं। इस प्रश्न के उत्तर के लिए मैंने बहुत-सी धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन किया मगर कोई निष्कर्ष नहीं निकल सका। करीब डेढ़ माह पहले एक मित्र के कहने पर मैं प्रजापिता ब्र० कु० आश्रम पहुँचा। शुरू में मुझे यहां का ज्ञान कुछ अजीब लगा लेकिन यहां की ब्र० कु० बहिनों की सादगी, मृदु व्यवहार तथा तेजोमय व्यक्तित्व से मैं अत्यंत प्रभावित हुआ। उस ज्ञान के प्रति मेरा और भी आकर्षण हुआ जिसने इन बहिनों को इतना उच्च व्यक्तित्व प्रदान किया।

जब मैं ७ दिन के आरम्भिक पाठ्यक्रम के बाद मुरली सुनने लगा तो मुझे लगा—'जैसे कोई हमारे अत्यन्त निकट से हमारी गतिविधियों को बारीकी से देख रहा है तथा हमें कमजोरियों व बुराइयों को छोड़ने एवं अलौकिक गुणों को अपने में समाहित करने की निरंतर प्रेरणा दे रहा है।' इसके अतिरिक्त यहां राजयोग का अभ्यास भी कराया जाता है। इसके आनन्द का वर्णन नहीं किया जा सकता, केवल अनुभव किया जा सकता है।

मैंने यह अनुभव किया कि आश्रम में आने के बाद मेरे आत्मविश्वास में अप्रत्यक्ष रूप से वृद्धि हुई है तथा विभिन्न प्रकार के अंतर्द्वन्द्व से उत्पन्न होने वाली अशांति के स्थान पर मानसिक शांति प्राप्त होने लगी है।

अभी पिछले दिनों ७ दिन तक मैं पारिवारिक कारणों से ब्र० कु० आश्रम नहीं जा सका। सातवें दिन मुझे लगा—मानो मैं सत्य से दूर हो गया हूँ, अपवित्र होता जा रहा हूँ तथा माया ने जैसे मुझे जकड़ लिया है। आठवें दिन जब आश्रम पहुंचा तो महसूस हुआ—जैसे भयंकर गर्मी में पवित्र, शीतल जल मिल गया हो और मैं उसमें स्नान करके तन-मन से पवित्र हो रहा हूँ।

इन सभी अनुभवों से ईश्वर में मेरी आस्था दृढ़ हुई है और मैं तनाव-मुक्त हुआ हूँ तथा इस नतीजे पर पहुंचा हूँ कि अगर कोई व्यक्ति परम पिता परमात्मा द्वारा निरन्तर दिए जा रहे अलौकिक ज्ञान के अनुसार अपने आपको ढाल ले तो इस जन्म में ही देवता तुल्य बन सकता है। मैं स्वयं भी परम पिता परमात्मा द्वारा दिए जा रहे अलौकिक ज्ञान को प्राप्त करने तथा उस पर चलने का निरन्तर प्रयास करता रहूंगा। मेरा यही दृढ़ संकल्प है।

बीलीमोरा— चीखली गाँव में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' के उद्घाटन समारोह में ब्र० कु० सरला, निदेशक, गुजरात जोन, प्रवचन करते हुए।

कोचीन में आयोजित त्रि-दिवसीय 'शान्ति-शिविर' के उद्घाटन समारोह में भाता एस० परमेश्वरन, उपाध्यक्ष, अ० भा० श्री० सभा अपने उद्गार प्रगट करते हुए।

नैतिकता

ब्र० कु० भावना, राजगढ़ (म० प्र०)

यदि मनुष्य ईश्वर की सृष्टि का शृंगार है तो मनुष्य का शृंगार नैतिकता है। नैतिकता ऐसा साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने आपको आदर्श बना सकता है। नैतिकता का अर्थ ही है अपने चरित्र का निर्माण करना और अपने आपको सुसभ्य बनाना।

"किसी भी मनुष्य के पास यदि कोई सर्वोच्च खजाना है तो वह उसका चरित्र है"

"किसी राष्ट्र के पास यदि कोई सम्पदा है तो वह है उसके चरित्रवान नागरिक"

चरित्र ही मनुष्य की सबसे बड़ी निधि है। नैतिकता जीवन का वह अनमोल खजाना है जो मन, बुद्धि, विचार, संस्कार, वाणी, व्यवहार तथा कर्म, सभी को समृद्धिशाली एवं मर्यादाशील बना देता है

नैतिकता को अपनाने वाला व्यक्ति केवल अपने लिये ही नहीं अपितु सभी के लिये सुखदाई होता है। वह अपने चरित्र की दिव्य लौ से समाज को आलोकित किये रहता है अथवा भवसागर में बहती हुई अन्य जीवन-नौकाओं के लिये प्रकाश स्तम्भ (लाइट हाऊस) का कार्य करता है।

किन्तु वर्तमान परिस्थितियाँ किसी और ही वास्तविकता को उजागर करती हैं। वर्तमान समय आम आदमी का चरित्र 'चार आने पाव' विक्रय-तुल्य हो गया है, उसी का परिणाम सामने है कि जो भारत दानी था वह आज गरीब हो गया है।

मानव एक बौद्धिक प्राणी है । उसके अन्दर निर्णय शक्ति, विचार शक्ति, अनुभव शक्ति व संघर्ष शक्ति है। इन शक्तियों के कारण मानव एक विशेष प्राणी माना जाता है। मनुष्य इन शक्तियों के आधार पर मानव से देवता भी बन सकता है व इन शक्तियों के दुरुपयोग से दानव भी बन सकता है।

आज मनुष्य इन शक्तियों के दुरुपयोग में लगा है जिसके कारण आज वातावरण इतना दूषित बना हुआ है जिससे हर स्थान पर मानव का जीवन असुरक्षित है। चोरी, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार मिलावट व हिंसा का वातावरण बना हुआ है । चारों ओर अनेकानेक समस्याएं व्याप्त हैं–कहाँ तक उनका वर्णन करें? आज यदि कोई समस्याओं की सूची बनाने बैठे तो अच्छा-खासा शास्त्र बन जाये। मनुष्य एक समस्या को सुलझाने लगे तो और भी कई समस्याए पैदा हो जाती हैं।

आज मानव के कदम-कदम में पद्म नहीं बल्कि प्रश्न व प्राब्लम हैं। इस का भी एक ही कारण है कि आज मानव का कोई नैतिक चरित्र नहीं है।

मानव जीवन से नैतिकता की समाप्ति होने जा रही है और उसकी जगह भौतिकता की अधिक वृद्धि हो चुकी है। वास्तव में नैतिकता और भौतिकता दो टाँगें हैं, जिसके आधार पर ही जीवन रूपी गाड़ी चल रही है।

नैतिकता नहीं तो अध्ययन ही अधूरा है। इतिहास साक्षी है कि संसार के महान से महान् राजनेताओं, धर्म नेताओं या पूँजीपतियों के पतन का कारण चरित्रहीनता व अनैतिकता ही बना । भले ही कोई अनेक प्रकार की पुस्तकों को पढ़कर कितना भी विद्वान, धनवान हो, शारीरिक शक्ति व अधिकार की शक्ति हो परन्तु चरित्र की शक्ति नहीं है तो वह व्यक्ति बिलकुल ही तुच्छ है।

एक वैज्ञानिक ने भी कहा था– किसी देश का सोना-चाँदी उसको महान् नहीं बनाता, मनुष्य के जीवन में चरित्र की आवश्यकता है।

यदि हम मनुष्य के समस्त व्यवहार का विश्लेषण करें तो हम देखेंगे कि स्वार्थ और अहं-भाव ने स्वर्ग को नर्क और महकते बगीचों को जलते हुये जंगलों में परिवर्तित किया है। इन्हीं से ही संसार में लूटमार का बाजार गर्म है। हर आये दिन हम मारकाट का समाचार पढ़ते हैं।

आज का मनुष्य दैवी-नीति की बजाय कलियुगी तमोगुणी नीति को अपनाता है कि छोटों को रोब से दबाकर, बड़ों को मार्ग से हटाकर और समतल वालों को पटाकर चलाना ही आगे बढ़ना है। मनुष्य स्वयं तो दूसरों से ऐसा व्यवहार कर लेता है परन्तु जब दूसरे उससे ऐसा व्यवहार करते हैं तो वह जगह-जगह कहता फिरता है कि ऐसा मनुष्य कैसे निकृष्ट स्वभाव का है कि वह हमसे अभद्र व्यवहार करता है। गोया वह स्वयं तो खोटा सिक्का नहीं लेना चाहता, दूसरों को जाली नोट देकर ठगने के लिये झट से तैयार हो जाता है।

यदि मनुष्य में नैतिकता नहीं तो वह न केवल अपराधी बनकर अपने जीवन को दूषित करता है बल्कि वही अपने परिवार वालों को तथा दूसरों को भी दुखी करता है।

आज हमारे पास गरीबी धन की नहीं, खाने-पीने की नहीं बल्कि चरित्र की गरीबी है।

जब मनुष्य श्रेष्ठ व चरित्रवान था तो उस समय की महिमा है–

"भारत सोने की चिड़िया थी"

भारतीय जीवन का प्राचीन आदर्श पश्चिम की भोगवादी आँधी में उड़ गया है।

राष्ट्रीय चरित्र का अभाव भी भ्रष्टाचार को जन्म देता है। आज प्रायः देश का सरकारी और सार्वजनिक जीवन से संबंधित प्रायः कोई भी अधिकारी इस रोग से बच नहीं पाया है। अस्पताल से लेकर न्यायालय तक इस भ्रष्टाचार का जाल फैला है। भारत जैसे स्वतंत्र देश के लिए प्रशासन का भ्रष्टाचार अभिशाप है, कलंक है, राष्ट्र को इस प्रबल शत्रु को मारने के लिये क्रांतिकारी कदम उठाने जरुरी हैं लेकिन यह तभी संभव है जब यहाँ के देशवासियों में नैतिकता और चरित्र-बल हो।

आज जलप्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण के कारण लोग चिंतित हैं। उसकी रोकथाम के लिये प्रयास कर रहे हैं। परन्तु मनुष्य का मन दूषित है, उसकी और किंचित भी ध्यान नहीं है। आज भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता मनुष्य के खून में समा गई है, वह अपने और पराये का फर्क तक भूल गया है। इसलिये, गली-कूचे में, हर एक मोहल्ले में, हर एक गाँव में, हर एक शहर में, यहाँ तक सारे विश्व में आज इन दोनों का ही बोलबाला है। भ्रष्टाचार व अनैतिकता से न तो कोई देश, न कोई जाति, न ही कोई धर्म अछूता बचा है। इन दोनो में से कौन बड़ा, कौन छोटा है–यह निर्णय करना भी कठिन है। वैसे यह दोनों "एक ही सिक्के के दो पहलू हैं"। इन में से यदि एक प्रवेश कर जाये तो दूसरा स्वयं चला आता है। आजकल इनसे बचना बहुत कठिन है परन्तु जो योद्धा बन कर इन पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, वो महान् बन जाते हैं। अब विचार करें कि नैतिकता लाने का साधन क्या है? नैतिकता आएगी ज्ञान से और ज्ञान भी किसका? स्वयं का, स्वयं के पिता का व सृष्टि-चक्र का।

"मैं आत्मा हूँ और शुद्ध हूँ और नैतिकता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है, मैं परम पिता परमात्मा की संतान हूँ। परमपिता सर्वशक्तिवान, परम पवित्र है"

परन्तु नैतिकता का पालन तब होगा जब आत्मशक्ति हो। आत्मिक-शक्ति मिलती है राजयोग से। राजयोग माना विदेही बन विदेही बाप-परमात्मा को याद करना।

शरीर से न्यारा होकर एक परमात्मा की याद में रहेंगे तो हमारे अन्दर नैतिकता को पालन करने की शक्ति आयेगी।

पृष्ठ १२ का शेष

धैर्यता की शक्ति

है और धैर्यता से किया हुआ कार्य प्राप्ति स्वरूप होता है। धैर्यता की शक्ति से आप किसी को भी झुका सकते हैं अर्थात् उसके अन्दर महसूसता की शक्ति पैदा कर सकते हैं और महसूसता की शक्ति ही आगे परिवर्तन शक्ति को जन्म देती है। धैर्यता की शक्ति से ही आप अपनी श्रेष्ठ भावनाओं को दूसरों में भर सकते हैं। स्वयं के और दूसरों के विघ्नों को भी समाप्त करने के लिये धैर्यता की शक्ति के साथ विघ्न विनाशक स्थिति में टिके रहें तो सफलता की प्राप्ति सहज हो सकती है और दूसरों को सहयोगी बना सकते हैं, ग्लानि करने वालों को गले लगा सकते हैं।

धैर्य की शक्ति में सर्व गुण समाये हुए होने के कारण हम अपनी स्वस्थिति को प्रत्यक्ष कर सकते हैं और स्वस्थिति ही बापदादा की प्रत्यक्षता का आधार है। इसलिये, हे राजयोग के पथ पर चलने वाली राजयोगी और राजऋषि आत्माओ! धैर्यवत होकर विश्व की सर्व आत्माओं को धैर्य दो और स्वयं को और बापदादा को प्रत्यक्ष कर सर्व की मनोकामनायें पूर्ण करो।

कामना

कामना करूं मैं एक ऐसे संसार की,

अहिंसा, प्रेम, शान्ति हो, मानवों में प्यार हो,
भाई बीच भाई से न कोई तकरार हो,
आपस के वैर भूल, संग-संग रहें सभी,
उन्नति के रास्ते पर, मिलकर बढ़ें सभी,
कामना करूं मैं एक ऐसे संसार की।

निर्मल, निःस्वार्थ, स्वच्छ हो मन की भावना,
लोग एक दूसरे के शुभ की करें कामना,
नारी को सम्मान मिले, बच्चों को अनुराग मिले,
आदर्शमयी जिंदगी हो, कर्म ही उपासना,
कामना करूं मैं एक ऐसे संसार की

आत्मा हर एक करे प्रेम की आराधना,
शान्तिमय जीवन का लक्ष्य चारों ओर हो,
दूसरे की खुशी में अपनी खुशी निहित हो,
कामना करूं मैं एक ऐसे संसार की।

ब्र० कु० शीला, मालवीय नगर, दिल्ली

दिल्ली (कृष्णानगर) सेवाकेन्द संचालिका ब्र० कु० कमलमणि जी के विदेश से लौटने पर डा० बी० एस० डिंगरा जी उनका स्वागत कर रहे हैं।

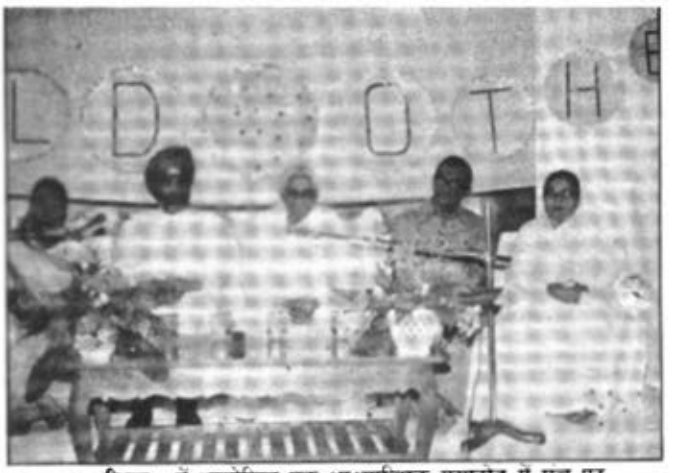

चण्डीगढ में आयोजित एक आध्यात्मिक समारोह में मंच पर उपस्थित हैं (बाएं से) बहन गायत्री मोदी, सुरजीत सिंह मिन्हास, दादी प्रकाशमणि जी, ट्रिब्यून पत्र समूह के मुख्य सम्पादक भ्राता बी० एन० नारायण तथा ब्र० कु० प्रेम बहन।

नारनौल में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का उद्घाटन बिजली बोर्ड के कार्यकारी अभियन्ता टेप काटते हुए कर रहे हैं।

राजनांदगाँव – ग्राम हरदी में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का उद्घाटन मोमबत्तियां प्रज्जवलित करते हुए किया जा रहा है।

कलकत्ता आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन करने हेतु जैन धर्म की साध्वी बहनें पधारीं। चित्र में वे ब्र० कु० दादी निर्मलशान्ता तथा अन्य के साथ दिखाई दे रही हैं।

खण्डवा – सब के सहयोग से सुखमय संसार योजना के अन्तर्गत आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी के उद्घाटन दृश्य में भ्राता ओमप्रकाश मेहता, अध्यक्ष, पंजाबी हिन्दू समाज तथा अन्य दिखाई दे रहे हैं।

कलकत्ता (रायबगान) सालकिया बजरंगबली मन्दिर में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए ज़िला महासचिव भ्राता पथक जी।

बुरहानपुर– सावदा में आयोजित 'शान्ति-पथ-प्रदर्शनी' का उद्घाटन ब्र० कु० सुधा बहन तथा अन्य मोमबत्तियां जलाते हुए कर रहे हैं।

उदयपुर में आयोजित एक समारोह में ब्र० कु० शील बहन तथा अन्य गरीब लोगों को भोजन परोसते हुए।

कलकत्ता– बंगूर एवन्यू में नये सेवाकेन्द्र का शिलान्यास करने के पश्चात् ब्र० कु० दादी प्रकाशमणि जी, मुख्य प्रशासिका, इं० वि० वि० तथा अन्य प्रसन्न मुद्रा में दिखाई दे रहे हैं।

जाम जोधपुर में विश्व सहयोग आध्यात्मिक बैंक के उद्घाटन समारोह में स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र के शाखा-प्रबन्धक भ्राता सी० पुरोहित जी अपना वक्तव्य देते हुए।

नैनीताल में आयोजित एक कार्यक्रम में बैंक मैनेजर, इन्जीनियर्स, प्रिन्सीपल तथा अन्य गणमान्य व्यक्ति ब्र० कु० हृदय मोहिनी जी के साथ एक ग्रुप फोटो में दिखाई दे रहे हैं।

भिलाई नगर के विधायक भ्राता रवि आर्या जी को आध्यात्मिक संग्रहालय में चित्रों पर व्याख्या देती हुई ब्र० कु० उषा बहन।

पटना सेवा केन्द्र पर बिहार राज्य की राजस्व मंत्री बहन उषा पाण्डे जी सपरिवार पधारीं। चित्र में वे ब्र० कु० निर्मलमणि, ब्र० कु० निर्मलपुष्पा तथा अन्य के साथ दिखाई दे रही हैं।

कुल्लू में नव-निर्मित 'राजयोग भवन' पर शिव का झण्डा लहराने के पश्चात् दादी प्रकाशमणि जी तथा अन्य ईश्वरीय याद में खड़े हैं।

पुरी – 'सेवा निवृत कर्मचारी संघ' के १८वें वार्षिक सम्मेलन में ब्र० कु० निरुपमा बहन प्रवचन करते हुए।

जलालाबाद – 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' योजना के अन्तर्गत आयोजित एक कार्यक्रम में मंच पर ब्र० कु० तृप्ता बहन तथा अन्य वक्तागण उपस्थित हैं।

सम्बलपुर – बोध में आयोजित धार्मिक नेताओं के सम्मेलन में ब्र० कु० पार्वती बहन प्रवचन करते हुए।

जगदीश चन्द हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी ९/१९ कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओम शान्ति प्रैस, कृष्णानगर, देहली-५१ से छपवाया Regd No. 10563/65-D. (E)—70